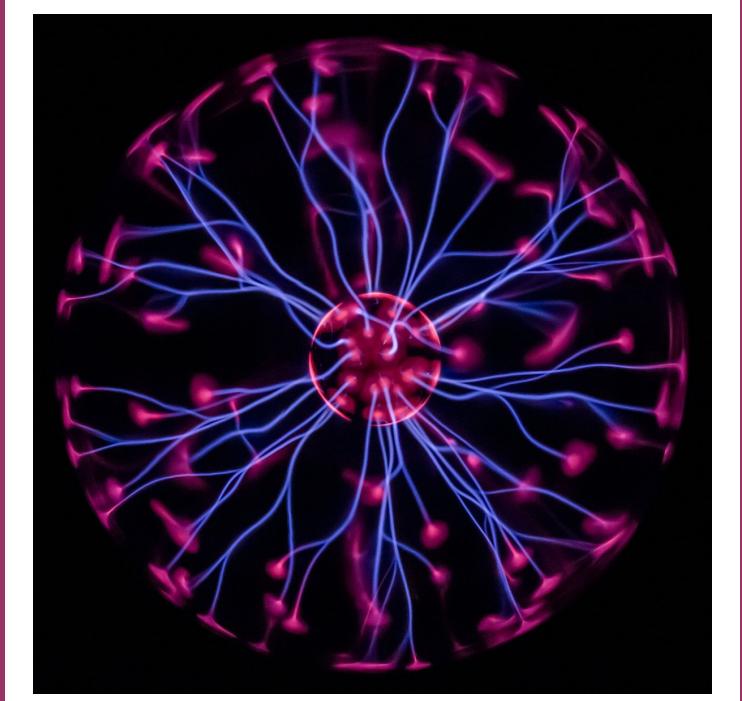


हमारे जीवन में प्लाज्मा



प्लाज्मा अनुसंधान संस्थान, गांधीनगर

&

राष्ट्रीय विज्ञान और प्रौद्योगिकी संचार परिषद, नई दिल्ली

का संयुक्त परियोजना

2017



हमारे जीवन में प्लाज्मा

अनुक्रमणिका

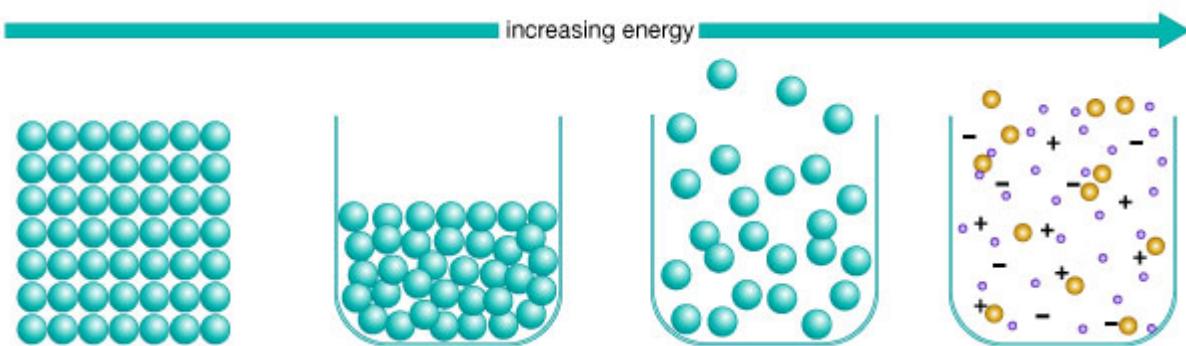
1. प्लाज्मा : पदार्थ की चौथी अवस्था, या फिर पहली ?	2
2. चिप और प्लाज्मा	12
3. प्लाज्मा डिस्प्ले पैनल	16
4. प्लाज्मा से वेल्डिंग	21
5. चिकित्सा क्षेत्र में प्लाज्मा	26
6. प्लाज्मा द्वारा रॉकेट प्रणोदन	31
7. प्लाज्मा से पर्यावरण की स्वच्छता	36
8. नाभिकीय संलयन से ऊर्जा	41
9. 'इटर' की कहानी	47
10. प्लाज्मा अनुसंधान संस्थान - एक परिचय	59
11. प्लाज्मा के सामाजिक उपयोग : आईपीआर का योगदान	67
12. परमाणु विखंडन से ऊर्जा	73

प्लाज्मा : पदार्थ की चौथी अवस्था, या फिर पहली ?

पदार्थ की अवस्थाएँ

हम पदार्थ की तीन अवस्थाओं- ठोस, द्रव एवं गैस से परिचित हैं जैसा कि हमें स्कूल में सिखाया गया था। हमें यह भी पढ़ाया गया था कि पदार्थ को गरम करने से अणुओं के बीच के बंधन टूट जाते हैं, जिससे पदार्थ एक अवस्था से दूसरी अवस्था में परिवर्तित हो जाता है - जैसे कि - ठोस से द्रव या फिर द्रव से गैस में। उदाहरण स्वरूप, बर्फ को गरम करने पर वह पिघल कर पानी बन जाता है, तथा पानी को गरम करने पर वह वाष्प यानी गैस में बदल जाता है।

यदि हम गैस को और अधिक गरम करें तो क्या होगा? गैस को गरम करने पर उसके अलग-अलग परमाणुओं के आंतरिक बंधन टूट जाते हैं। इस प्रक्रिया में परमाणुओं से कुछ इलेक्ट्रॉन मुक्त हो जाते हैं तथा परमाणुओं का आयनीकरण हो जाता है। जब इस प्रक्रिया से काफी अधिक परमाणु आयनित हो जाते हैं तब यह गैस विद्युत आवेशित कणों का समूह यानि आयनित गैस बन जाता है, जिसे प्लाज्मा कहते हैं(चित्र 1)।



ठोस: इसमें अणु एक नियमित ढांचे में व्यवस्थित होते हैं। वे अपने स्थान पर मजबूती से संघित होते हैं तथा अपने औसत स्थान के इर्द-गिर्द सीमित क्षेत्र में ही हिल-डुल सकते हैं। इनका आकार निश्चित होता है।

द्रव: द्रव के अणु एक दूसरे के आस-पास आसानी से आ-जा सकते हैं। हालांकि अणुओं के बीच आकर्षण बल होने के कारण वे एक दूसरे से दूर नहीं जा सकते। जिस पात्र में द्रव को रखा जाता है वह उसका आकार धारण कर लेता है।

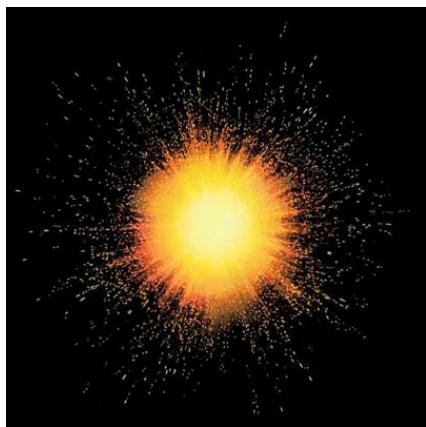
गैस: गैस के अणु सभी दिशाओं में तीव्र गति से भागते रहते हैं। ये अणु एक दूसरे से इतने दूर होते हैं कि इनके बीच का आकर्षण बल नगण्य होता है।

प्लाज्मा: अत्यधिक तापमान पर, जैसे तारों में अणु अपने इलेक्ट्रॉनों से मुक्त हो जाते हैं, इलेक्ट्रॉनों तथा नाभिकों का यह मिश्रण ही पदार्थ की प्लाज्मा अवस्था है।

चित्र 1: पदार्थ की अवस्थाएँ (चित्र स्रोत: इन्साइक्लोपीडिया ब्रिटैनिका)

जब ब्रह्माण्ड की रचना हुई

जैसा कि हम अब जानते हैं, महाविस्फोट (बिंग बैंग) से ब्रह्माण्ड की शुरुआत होने के तुरंत बाद इसमें अत्यधिक तापमान पर प्लाज्मा ही प्रमुख रूप से था (चित्र 2)। यह रोचक तथ्य है कि आज भी हमारा दृश्यमान ब्रह्माण्ड 99 प्रतिशत प्लाज्मा से ही बना है। आरंभ में केवल प्लाज्मा ही सर्वत्र था और हम सब की उत्पत्ति इसी से हुई। अभी भी हमारे ब्रह्माण्ड में प्लाज्मा एक प्रमुख भूमिका निभा रहा है, हालांकि हमें इसका स्पष्ट अनुभव नहीं है।



चित्र 2: महाविस्फोट: कलाकार की कल्पना
(Source: one-mind-one-energy.com/images/big-bang.jpg)

यदि ब्रह्माण्ड की शुरुआत में गरम प्लाज्मा ही प्रमुख था, तो विभिन्न अवस्थाओं में पदार्थ की रचना कैसे हुई? ब्रह्माण्ड की रचना, कमजोर बंधन वाले गर्म पदार्थ में से ऊर्जा के निकलने से हुई थी। पहले प्लाज्मा ठंडा होकर गैस बना, गैस और ठंडा होने पर द्रव, और फिर ठोस पदार्थ बना। ठंडा होने पर पदार्थ ऐसे तापमान पर पहुँच जाता है, जब अणु एवं परमाणु एक दूसरे से जुड़कर, संघनित होकर पदार्थ की अगली अवस्था का निर्माण करते हैं। प्रारंभिक ब्रह्माण्ड की तरह आज भी प्लाज्मा की प्रचुरता देखी जा सकती है। यद्यपि हमारे आस-पास के पदार्थ प्रारंभिक प्लाज्मा की तुलना में काफी ठंडे हैं, परंतु संपूर्ण ब्रह्माण्ड में विद्यमान पदार्थों का सबसे बड़ा अंश प्लाज्मा अवस्था में है।

जैसा कि पहले बताया गया है, ब्रह्माण्ड का लगभग सारा दृश्यमान पदार्थ प्लाज्मा अवस्था में है, जो सूर्य एवं तारों के अंदर तथा ग्रहों एवं तारों के बीच के क्षेत्र में व्याप्त होता है। क्या प्लाज्मा पृथ्वी पर भी पाया जाता है? तड़ित विद्युत (बिजली चमकना) (चित्र 3A), अरोरा (चित्र 3B), तथा वेल्डिंग आर्क- ये सब प्लाज्मा के उदाहरण हैं। प्लाज्मा निअॉन तथा फ्लोरोसेन्ट ट्यूबों, ठोस धातु की क्रिस्टल संरचनाओं तथा अन्य कई परिघटनाओं व वस्तुओं में होता है। पृथ्वी स्वयं सौर वायु नामक एक महीन प्लाज्मा में डूबी हुई है तथा आयन मण्डल नामक एक घने प्लाज्मा से घिरी हुई है।

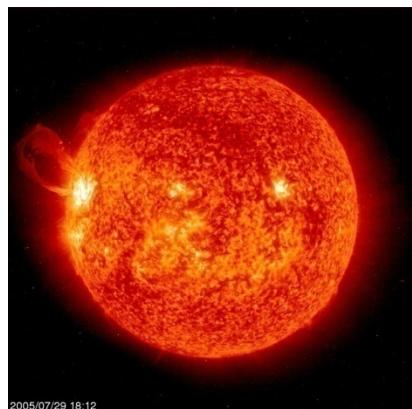


चित्र 3A: बिजली
(Source: wikigag.com)



चित्र 3B: अरोरा
(Source: images.nationalgeographic.com)

अंतरिक्ष में प्लाज़मा निर्माण की प्रमुख प्रक्रिया फोटो आयनीकरण होती है, जिसमें सूर्य अथवा तारों के प्रकाश से आ रहे फोटोन कण अवस्थित गैस में अवशोषित होकर इलेक्ट्रॉनों का उत्सर्जन करते हैं। चूंकि सूर्य और तारे लगातार प्रकाश बिखेरते रहते हैं, ऐसी स्थिति में पदार्थ पूरी तरह आयनीकृत होता है (चित्र 4)। हालांकि हमेशा ऐसा ही हो, यह जरूरी नहीं है, प्लाज़मा आंशिक रूप से भी आयनीकृत हो सकता है। एक पूर्णतया आयनीकृत हाइड्रोजन प्लाज़मा, जो सिर्फ इलेक्ट्रॉनों तथा प्रोटॉनों (हाइड्रोजन नाभिकों) से मिलकर बना होता है, सबसे मौलिक प्लाज़मा है।



चित्र 4: सूर्य और हमेशा चमकते रहने वाले तारों में निहित पदार्थ मुख्य रूप से प्लाज़मा स्वरूप में है।(Source: www.universesimplified.com)

प्लाज़मा एक पूर्वज तथा आज के युग में एक प्रमुख खिलाड़ी की तरह सम्मान पाने के लायक है। स्पष्टतः पदार्थ की अवस्थाओं के प्रचलित अनुक्रम को उलट देना चाहिए, जिसमें प्लाज़मा को न केवल शामिल करना चाहिए, बल्कि उसे सूची में प्रथम स्थान पर रखकर फिर गैस, द्रव तथा ठोस अवस्था आने चाहिए!

प्लाज़मा अवस्था

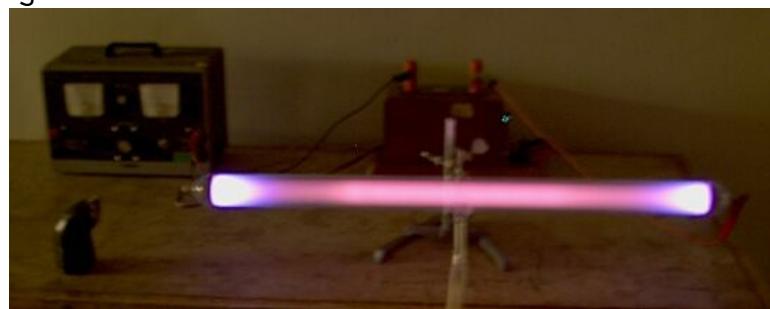
भौतिकी में प्लाज़मा एक विद्युत चालक माध्यम के रूप में माना जाता है, जिसमें धनावेशित तथा ऋणावेशित कणों की संख्या लगभग बराबर होती है एवं जो गैस के आयनीकरण

की वजह से पैदा होती है। ऋणात्मक आवेश इलेक्ट्रॉन वहन करता है, प्रत्येक इलेक्ट्रॉन में एक ऋणात्मक आवेश होता है। धनात्मक आवेश उन अणुओं या परमाणुओं द्वारा वहन किया जाता है, जिनमें से ये इलेक्ट्रॉन अलग हो गये हैं। यह संभव है कि अणुओं से अलग हुए इलेक्ट्रॉन (धनात्मक आयन) किसी अनावेशित अणु या परमाणु से जुड़ जाएं (ऋणात्मक आयन)। तब हमें ऐसा प्लाज्मा प्राप्त होता है, जिसमें धनात्मक एवं ऋणात्मक दोनों प्रकार के आयन होते हैं। प्लाज्मा एक विशिष्ट अवस्था है, जिसमें गुरुत्वाकर्षण बल के अलावा विद्युत एवं चुंबकीय बल भी प्रभावी होते हैं। चूंकि विद्युत-चुंबकीय बल अधिक दूरी में भी कार्य कर सकते हैं, प्लाज्मा को सामूहिक रूप से एक तरल जैसा माना जा सकता है, जबकि इसके कण एक दूसरे से कदाचित ही टकराते हैं!

प्लाज्मा विज्ञान का विकास

क्या प्लाज्मा को प्रयोगशाला में उत्पन्न किया जा सकता है? प्लाज्मा अवस्था की आधुनिक धारणा 1950 के दशक के शुरुआत में बनी है। इसका इतिहास इस तथ्य से और भी रोचक हो जाता है कि इसके साथ कई विषय जुड़े हैं। प्लाज्मा भौतिकी के विकास में जिन तीन मूल विषयों ने प्रारंभिक योगदान दिया, वे हैं - (i) विद्युत निस्सरणों का अध्ययन (ii) चुम्बकीय जलगतिकी (मैग्नेटोहाइड्रोडाइनामिक्स-एमएचडी), जिसमें विद्युत चालक जैसे तरल द्रव धातु, विद्युत-अपघट्य (इलेक्ट्रोलाइट) तथा प्लाज्माओं का अध्ययन तथा (iii) गतिक सिद्धांत। पिछले कुछ दशकों में प्लाज्मा भौतिकी के बारे में हमारी समझ कैसे विकसित हुई है, आइये इस पर संक्षिप्त जानकारी प्राप्त करें।

उन्नीसवीं शताब्दी के प्रारंभ में इसकी शुरुआत हुई जब विद्युत निस्सरण पर कार्य करने की रुचि बढ़ी। 1830 के दशक में माईकल फराडे (1791-1867), तथा 1890 के दशक में जे.जे.थामसन (1856-1940) और जॉन सीली टाउनसेन्ड (1868-1957) ने इस प्रक्रिया के वर्तमान ज्ञान की नींव रखी (चित्र 5)। संयोग से वे तीनों ही अंग्रेज थे। 1923 में अमेरिका के इरविंग लैंग्म्यूर (1881-1957) तथा लिवि टॉन्कस (1897-1971) ने 'प्लाज्मा' शब्द का इस्तेमाल किया। वे विद्युत निस्सरणों के उन क्षेत्रों को निर्दिष्ट करने के लिए कार्य कर रहे थे, जहाँ इलेक्ट्रॉनों का सामयिक परिवर्तन हो सकता है, तथा इसे प्लाज्मा दोलन का नाम दिया। लैंग्म्यूर ने इन विद्युत धाराओं को वहन करने वाले माध्यम को 'प्लाज्मा' नाम दिया क्योंकि इसका व्यवहार जीवन दायिनी रक्तरस की तरह था जिसके लिए प्लाज्मा शब्द का प्रयोग तब भी किया जाता था और यह नाम इसके साथ जुड़ गया।



चित्र 5: गैसों से विद्युत का निर्वहन (Source: web.physics.ucsb.edu)

मैग्नेटोहाइड्रोडाइनैमिक्स (एमएचडी) में किए जाने वाले द्रवित चालक के अध्ययन के अन्तर्गत चुंबकीय क्षेत्रों में आवेशी कणों के सामूहिक व्यवहार का अध्ययन भी किया जा सकता है। इसमें चुंबकीय क्षेत्रों में आवेशित तरल पदार्थों की गतिकी का अध्ययन होता है। 1930 के दशक में नये सौर एवं भूभौतिकीय घटनाओं की खोज की जा रही थी और आयनित गैसों व चुंबकीय क्षेत्रों के बीच की अंतःक्रिया से कई मूलभूत समस्याओं के अध्ययन किए जा रहे थे। स्वीडिश भौतिकशास्त्री हेन्स एलफेन (1908-1995) के एमएचडी तथा अंतरिक्ष प्लाज्मा अध्ययन में योगदानों के कारण उन्हें 1970 में भौतिकी क्षेत्र में नोबल पुरस्कार प्रदान किया गया। उन्होंने एमएचडी में जिन तरंगों की श्रेणी का वर्णन किया उन्हें अब एलफेन तरंगों के नाम से जाना जाता है।

विद्युत निस्सरण तथा चुंबकीय क्षेत्रों में विद्युत चालक तरल पदार्थों के अध्ययन को संयुक्त रूप में गतिकी सिद्धांत के अंतर्गत लाया गया जिससे प्लाज्मा अवस्था का अध्ययन भी किया जाता है। गैस की ही तरह प्लाज्मा में भी कण अनियमित गति से चलायमान होते हैं, जिनके बीच अंतःक्रिया लंबी-दूरी तक प्रभावी विद्युत चुंबकीय बलों या फिर आपसी टक्कर द्वारा हो सकती है। सन् 1905 में डच भौतिकशास्त्री हेन्ड्रिक एन्टून लॉरेन्ज(1853-1928) ने परमाणुओं के गतिकी समीकरण का प्रयोग (ऑस्ट्रियन भौतिकशास्त्री लडविंग एडुअर्ड बोल्जमैन द्वारा प्रतिपादित) धातुओं में इलेक्ट्रॉनों के व्यवहार का अध्ययन करने के लिए किया। तत्पश्चात् 1930 एवं 1940 के दशक के दौरान अनेक भौतिकशास्त्रियों व गणितज्ञों ने प्लाज्मा गतिकी सिद्धांत का और आगे विकास किया। तभी से लोगों की रुचि मुख्यतः प्लाज्मा अवस्था के अध्ययन पर ही केन्द्रित है। अंतरिक्ष अन्वेषणों, इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों का विकास, खगोलीय प्रक्रियाओं में चुंबकीय क्षेत्रों के महत्व तथा नियंत्रित ढंग से तापनाभिकीय ऊर्जा (नाभिकीय संलयन) रिएक्टर पर शोध इत्यादि विषयों पर कार्य इसी रुचि की वजह से हो रहा है।

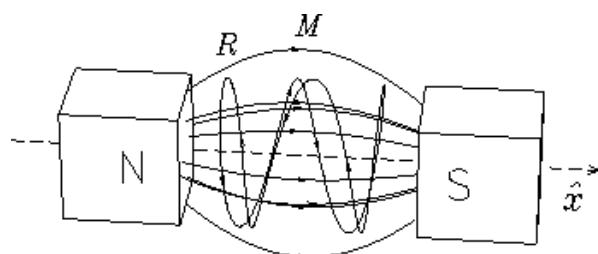
इसके बावजूद प्रक्रिया की जटिलता के कारण अंतरिक्ष प्लाज्मा जैसी भौतिकी अनुसंधान में कई समस्याएँ अभी तक अनसुलझी हैं। उदाहरण के लिए सौर वायु, जो सूर्य से निकलकर चारों ओर फैलने वाली आवेशित कणों का प्रवाह है, उसके सटीक विवरण के लिए हमें गुरुत्वाकर्षण, तापमान एवं दाब के प्रभावों, तथा उस पर पड़ने वाले विद्युत-चुंबकीय क्षेत्रों के प्रभावों को साथ में लेकर गणना करनी होगी जिससे यह विषय काफी जटिल हो जाता है।

प्लाज्मा का निर्माण एवं उसे बंधित रखना

सामान्यतया प्लाज्मा पृथ्वी की सतह पर प्राकृतिक रूप से नहीं पाया जाता, सिवाए इसके कि धातु क्रिस्टलों में प्लाज्मा ठोस अवस्था में होता है। अतः प्रयोगशाला में शोध एवं तकनीकी उपयोगों के लिए प्लाज्मा को कृत्रिम रूप से उत्पन्न करना जरूरी है। पोटेशियम, सोडियम तथा सीजियम जैसे क्षारों के परमाणुओं की आयनन ऊर्जा कम होने के कारण उन्हें लगभग 3000 केल्विन तापमान तक गरम करके प्लाज्मा उत्पन्न किया जा सकता है। हालांकि गैसों के साथ ऐसा नहीं है। अधिकतर गैसों में आयनन प्रक्रिया शुरू होने के लिए उनका तापमान 10,000

केल्विन होना जरूरी है। प्लाज़मा अध्ययन में तापमान मापने की एक सहज इकाई इलेक्ट्रॉनवोल्ट(eV) है। एक इलेक्ट्रॉन द्वारा प्राप्त की गई ऊर्जा 1eV के बराबर होती है। एक वोल्ट विद्युत विभव पर निर्वात में त्वरित होने से 1eV मतलब 12000 केल्विन होता है। स्वतः आयनन के लिए जरूरी तापमान 2.5 से 8eV होता है। संयोगवश, परमाणु से एक इलेक्ट्रॉन को अलग करने के लिए इतनी ही ऊर्जा की आवश्यकता होती है।

चूंकि इतने अधिक तापमान तक पहुँचने के काफी पहले ही सभी पदार्थ पिघल जाते हैं, अभी तक ऐसा कोई पात्र तैयार नहीं किया जा सका है जो प्लाज़मा निर्माण करने के लिए आवश्यक ताप को सह सके। तो फिर प्लाज़मा बनाने के लिए गैस को गरम कैसे किया जाए? एक तरीका यह है कि गैस में विद्युत धारा लगाकर उसमें उपस्थित मुक्त इलेक्ट्रॉनों को त्वरित किया जाए जिससे प्रकीर्णन होकर प्लाज़मा आंतरिक रूप से गरम हो जाए। इस प्रकार के तापन को ओमिक तापन कहते हैं। यह ठीक वैसा ही है जैसे एक विद्युत भट्टी (ओवन) में तापक एलीमेंट के मुक्त इलेक्ट्रॉन द्वारा कॉयल गरम होता है। ऊर्जा देकर इलेक्ट्रॉनों का तापमान दूसरे कणों की तुलना में काफी अधिक बढ़ाया जा सकता है क्योंकि टक्कर से इनका ऊर्जा क्षय होता है। प्लाज़मा उत्पन्न करने के लिए अत्यधिक उच्च विद्युत क्षेत्र की आवश्यकता होती है। उपकरण का आकार तथा गैस के दाब पर सटीक मात्रा निर्भर करती है। गैस में इलेक्ट्रॉनों या ट्रांसफॉर्मर पद्धति के माध्यम से विद्युत क्षेत्र लगाया जा सकता है, जिसमें चुंबकीय क्षेत्र में परिवर्तन की वजह से विद्युत क्षेत्र स्थापित होता है। प्रयोगशाला में ट्रांसफॉर्मर पद्धति द्वारा लगभग $100,000,000\text{K}$ या 8 किलो इलेक्ट्रॉन वोल्ट (keV) तापन तथा इलेक्ट्रॉन घनत्व 10^{19} प्रति घन मीटर प्राप्त किया गया है। यह घनत्व हमारे दैनिक जीवन में इस्तेमाल होने वाले गैस घनत्व की तुलना में काफी कम है। तापमान की मात्रा बाहरी क्षेत्र में ऊर्जा के क्षय पर निर्भर करती है।



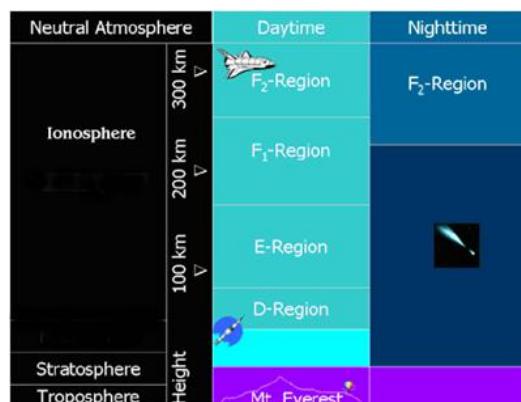
चित्र 6: एक चुंबकीय दर्पण प्रणाली: सरलीकृत चित्र (Source: jick.net)

“चुंबकीय दर्पण प्रणाली” में आयन एवं इलेक्ट्रॉनों को अलग से अंतःक्षेपित कर अत्यधिक उच्च तापमान परन्तु अपेक्षाकृत कम घनत्व वाले प्लाज़मा उत्पन्न किए गए हैं (चित्र 6)। इस प्रणाली में एक आवेशित कण उच्च चुंबकीय क्षेत्र से गुजरकर निम्न चुंबकीय क्षेत्र द्वारा परावर्तित होता है, जैसा कि चित्र में दिखाया गया है और इस प्रकार आवेशित कण चुंबकीय दर्पण क्षेत्र में परिसीमित रहता है। वास्तव में चुंबकीय दर्पण एक ऐसा उपकरण है, जिसमें गरम आवेशित प्लाज़मा को सीमाबद्ध रखने के लिए चुंबकीय क्षेत्रों की एक खास व्यवस्था का प्रयोग किया जाता है।

उच्च तापमान का प्लाज्मा बनाने और उसे परिसीमित करने के लिए टोरोइडल (डोनट) आकार के चुंबकीय क्षेत्रों का भी प्रयोग किया जाता है, जैसे तापनाभिकीय संलयन रिएक्टर, जिसमें संलयन ऊर्जा उत्पन्न करने पर शोध हो रहा है। तापनाभिकीय संलयन रिएक्टरों में नियंत्रित ढंग से ऊर्जा प्राप्त करना निकट भविष्य में वास्तविक हो सकता है। दूसरे तरीकों में उन उच्च तापमानों का प्रयोग किया जाता है, जो धूनि से भी तेज गति से चलने वाली तरंगों के पीछे उत्पन्न होते हैं। इन तरंगों को शॉक फ्रंट कहा जाता है। इसके लिए लेसर किरणों का भी उपयोग किया जाता है।

प्रकृति में प्लाज्मा की उत्पत्ति

हमें जात है कि प्लाज्मा उत्पन्न करने के लिए गैस को अत्यधिक उच्च तापमान पर गरम करना जरूरी है। प्रकृति में ऐसी कई घटनाएँ होती हैं, जिनमें प्लाज्मा का तापन तथा आयनीकरण ठीक उसी प्रकार से होता है, जैसा 'प्रयोगशाला में प्लाज्मा उत्पादन' विषय पर चर्चा करते समय बताया गया है। तड़ित उत्प्रेरित प्लाज्मा में विद्युत धारा से वातावरण ठीक उसी प्रकार गरम होता है, जिस प्रकार ओमिक तापन पद्धति में होता है। सौर तथा तारकीय प्लाज्मा में तापन आंतरिक होता है जो नाभिकीय संलयन प्रक्रियाओं द्वारा होता है। सौर प्रभामण्डल में तापन उन तरंगों द्वारा होता है जो सूर्य से निकलकर उसकी बाहरी सतह के प्लाज्मा को उसी प्रकार गरम करती है, जिस प्रकार प्रयोगशाला में शॉक-वेव करती है।



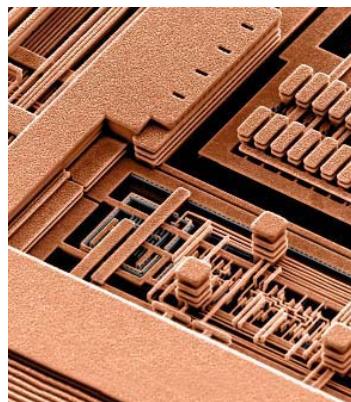
चित्र 7: विभिन्न ऊर्चाईयों पर अपने प्रमुख क्षेत्रों के साथ आयन-मंडल
(Source: solar-center.stanford.edu)

आयन-मंडल (चित्र 7) में आयनीकरण, तापन से नहीं बल्कि सूर्य से निकलने वाले उच्च ऊर्जा के फोटोनों द्वारा होता है। आयन-मंडल वायुमंडल की बाहरी परत है जो 200-500 कि.मी. की ऊर्चाई पर स्थित है, और इसमें इलेक्ट्रॉन तथा आयनों का जमाव बहुत ज्यादा है, जिससे रेडियो तरंगों का प्रसार संभव होता है। सूर्य से निकलने वाली अति पराबैंगनी किरणों तथा एक्स किरणों में पृथ्वी के वायुमंडल में स्थित परमाणुओं को आयनीकृत करने के लिए पर्याप्त ऊर्जा होती है। इस ऊर्जा का कुछ भाग गैस को गरम करता है, जिसमें ऊपरी वायुमंडल, जिसे थर्मोस्फीयर भी

कहते हैं, अत्यंत गरम रहता है। ये प्रक्रियाएँ उच्च ऊर्जा के फोटॉनों से पृथ्वी की रक्षा उसी प्रकार करती है, जिस प्रकार ओजोन परत पार्थिव जीवों की निम्न ऊर्जा वाली पराबैंगनी किरणों से रक्षा करती है। पृथ्वी की सतह के 300 कि.मी ऊपर का औसत तापमान 1200K या लगभग 0.1eV होता है। हालांकि यह तापमान पृथ्वी की सतह के तापमान की तुलना में काफी अधिक है, परन्तु स्वतः आयनन के लिए यह काफी कम है। सूर्य के अस्त होने पर आयनन का स्रोत रुक जाता है, तथा आयन मंडल का निचला भाग फिर से अपनी प्लाज्मा विहीन अवस्था में लौट जाता है। फिर भी कुछ आयन, जैसे एकल आवेशित ऑक्सीजन ($0+$) काफी देर तक बने रहते हैं जिससे अगले सूर्योदय तक कुछ प्लाज्मा रहता है। ऑरोरा के संदर्भ में, प्लाज्मा रात में या दिन में वायुमंडल में उस समय बनता है, जब इलेक्ट्रॉन पुँज लाखों इलेक्ट्रॉन वोल्ट के विभव पर त्वरित होकर वायुमंडल में टकराते हैं।

दैनिक जीवन में प्लाज्मा

लगभग सभी विद्युत उपकरण इलेक्ट्रॉनिक चिप पर आधारित हैं। कम्प्यूटर ही नहीं, बल्कि हमारी कार, माइक्रोवेव ओवन, अलार्म घड़ी - इन सभी गैजेटों के भीतर चिप होती हैं। और खास बात यह है कि प्लाज्मा का इस्तेमाल किये बिना ये चिप नहीं बनाई जा सकतीं। क्योंकि प्लाज्मा तकनीक, ऐसे ट्रांजिस्टरों और तारों को बनाने में सक्षम है, जो मनुष्य के एक बाल से भी बहुत पतले होते हैं। बिना प्लाज्मा के, ट्रांजिस्टर ज्यादा बड़ा बनता है, जिससे चिप अधिक महंगी, धीमी गति की और कम शक्तिशाली होती है।



चित्र 8: एक चिप पर तारों के इस माइक्रोस्कोप तस्वीर में सबसे छोटे तार एक बाल के मुकाबले 100 गुना पतले होते हैं (Source: Computer Chips and Plasma, www.plasmacoalition.org)

कार, पुल, जहाज, जेट इंजन, पाइपलाइन, गर्म-पानी के यंत्र, इमारतों के धातु ढांचे - वास्तव में अधिकांश विनिर्मित वस्तुएँ धातुओं को आपस में जोड़ने से बनती हैं। इनमें से कई धातुओं को जोड़ने के लिए वेल्डिंग करने में प्लाज्मा का उपयोग किया जा रहा है।

हम दिन-रात प्रकाश के लिए ट्यूब लाईट या सीएफएल का उपयोग करते हैं, उसमें भी प्लाज्मा निहित है। प्लाज्मा को देखना हमारे जीवन का हिस्सा बना गया है (चित्र 9A एवं चित्र 9B)। हम दुकानों के साइन बोर्ड पर और बड़े स्क्रीन पर विज्ञापनों में, सपाट (फ्लैट) प्लाज्मा टीवी में प्लाज्मा देख सकते हैं। आजकल टीवी बाजार में सपाट प्लाज्मा टीवी बहुत लोकप्रिय है।



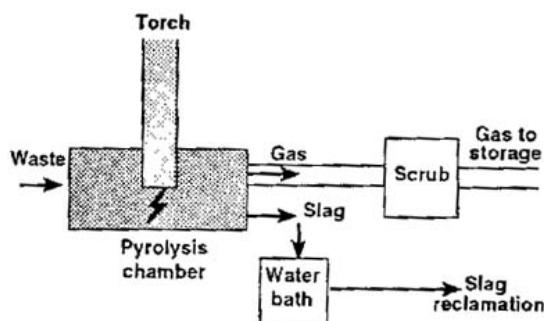
चित्र 9A: पैनासोनिक का 145 इंच प्लाज्मा टीवी
(Source: Panasonic Corporation)



चित्र 9B: प्लाज्मा साइनेज
(Source: news.slacs.stanford.edu)

पिछले दशक में चिकित्सा के क्षेत्र में प्लाज्मा के उपयोग पर हुए शोध में काफी तीव्रता आई है और अब वर्तमान में प्लाज्मा अप्रत्याशित रूप से स्वास्थ्य में सुधार लाने में उपयोगी साबित हो रहा है। वैज्ञानिकों ने कई ऐसे तरीके ईजाद किये हैं जिसमें प्लाज्मा से जीवित कोशिका के रोगाणुओं को निष्क्रिय करना, स्वस्थ कोशिका को हानि पहुँचाए बिना रक्त स्राव को रोकना, संक्रमण से घाव को बचाना और तेजी से घाव को भरना और प्लाज्मा से कैंसर की कुछ कोशिकाओं की पहचान कर ऐसी कोशिकाओं को नष्ट किया जा सकता है।

वैज्ञानिकों ने प्लाज्मा तैयार करने में कई ऐसे नये तरीके विकसित किये हैं, जो जीवाणुनाशन और परिशोधन के लिए उपयुक्त हैं। इन प्लाज्माओं की प्रकृति 'ठंडी' होती है। इस प्लाज्मा को बनाने वाली गैस का तापमान सामान्य तापमान के करीब रहता है। इस वजह से प्लाज्मा के संपर्क में आने वाली सतह को कोई नुकसान नहीं पहुँचता।



चित्र 10: प्लाज्मा पाइरोलिसिस संयंत्र (योजनाबद्ध रूप)
(Source: cO3.apogee.net)

प्लाज्मा में आवेशित और अनावेशित कणों का तापमान कचरा-भट्टी के तापमान की तुलना में बहुत अधिक होने के कारण कचरे को पूरी तरह से नष्ट कर सकते हैं। इसके अलावा कचरा जलाने के लिए एक कचरा-भट्टी में अधिक मात्रा में हवा की आवश्यकता होती है, जबकि उच्च तापमान के तापीय प्लाज्मा का उत्पादन करने में बहुत कम गैस प्रवाह की आवश्यकता होती है, क्योंकि इसके लिए हवा या ऑक्सीजन की जरूरत नहीं है। इसलिए नगर निगम या अस्पतालों का कचरा पूरी तरह से नष्ट करने के लिए कचरा भट्टी के बदले प्लाज्मा भट्टी (पाइरोलिसिस चैम्बर्स) का इस्तेमाल किया जा सकता है (चित्र 10)। इससे दहन उत्पाद कम होता है। चित्र में दिखाई गई 'टॉर्च' प्लाज्मा टॉर्च है, जो प्लाज्मा का सीधा प्रवाह उत्पन्न करती है। दूषित वातावरण में फैले प्रदूषकों की मात्रा को कम करने का काम करता है। यह खर्चीले गैस फिल्टरों की आवश्यकता को कम करता है। स्लैग, एक काँच के समान उप-उत्पाद है, जो सामान्यतः ऑक्साइड एवं सिलिकॉन डाई ऑक्साइड का मिश्रण है।

प्लाज्मा सर्वत्र व्याप्त है

तापनाभिकीय संलयन में प्लाज्मा से प्रदूषण मुक्त ऊर्जा प्राप्त करने का हमारा सपना साकार हो सकता है। पदार्थ का चौथा (या पहला!) स्वरूप प्लाज्मा प्रकृति में दृश्यमान 99 प्रतिशत से अधिक पदार्थ में निहित है। लेकिन प्रयोगशाला में प्लाज्मा का उत्पादन करना अपने आप में एक चुनौती है, और बाद में इसे अपने हित के लिए उपयोग में लाने की प्रक्रिया और भी अधिक चुनौतीपूर्ण है। हालांकि उद्योगों में प्लाज्मा के विभिन्न उपयोग देखने को मिलते हैं, और इससे कई तकनीकियों को सक्षम बनाया गया है, जो हमारे दैनिक जीवन में व्यापक रूप से उपयोगी हैं। माइक्रोइलेक्ट्रॉनिक के उत्पाद, बड़े क्षेत्र के प्रदर्शन बोर्ड, लाइटनिंग, पैकेजिंग और जेट ईंजन टर्बाइन ब्लेड के लिए सौर कोशिका और यहाँ तक की मनुष्य के अंगों के प्रत्यारोपण में उपयोग किये जा रहे साधनों के निर्माण में भी प्लाज्मा का इस्तेमाल किया जा रहा है। प्लाज्मा एचिंग (नक्काशी) से सतहों पर छोटी और बारीक आकृति बनाई जा सकती है। कुल मिलाकर परिणाम है - हमारे जीवन की गुणवत्ता में सुधार।

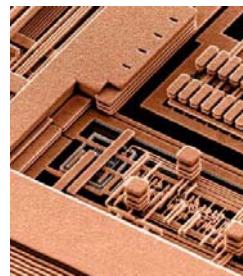
संदर्भ

1. www.plasmacoalition.org : A wonderful resource with popular articles on various aspects of plasma science.
2. Encyclopaedia Britannica : Article on plasma physics
3. www.howstuffworks.com
4. Several Articles in Wikipedia

चिप और प्लाज्मा

दुनिया चिप पर निर्भर है

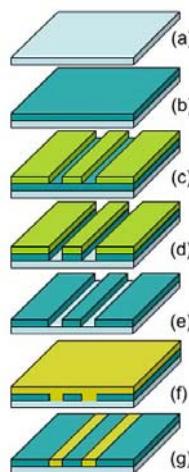
वर्तमान समय में दुनिया इलेक्ट्रॉनिक चिप पर चल रही है। किसी भी इलेक्ट्रॉनिक उपकरण के बारे में सोचिए। इसकी पूरी संभावना है कि वह एक इलेक्ट्रॉनिक चिप पर निर्भर होगा। हर रोज हमारे द्वारा इस्तेमाल किये जाने वाले अधिकांश उपकरण - कम्प्यूटर, कार, टेलीविजन सेट, रेडियो, यहाँ तक की माइक्रोवेव ओवन के अंदर भी चिप होते हैं। सबसे रोचक तथ्य यह है कि प्लाज्मा का इस्तेमाल किये बिना हम यह चिप नहीं बना सकतें। वह कैसे? वह इसलिए क्योंकि यह वास्तविकता है कि प्लाज्मा तकनीकी से ऐसे ट्रांजिस्टर और तार बनाए जा सकते हैं जो एक बाल से (चित्र 1) से भी बहुत पतले होते हैं। यदि प्लाज्मा का इस्तेमाल नहीं किया जाए तो ये ट्रांजिस्टर बहुत बड़े बनते हैं। इससे न केवल चिप अधिक महंगा बनता है, बल्कि धीमी गति का होने से कम शक्ति का होता है।



एक चिप पर सबसे छोटे तार, एक बाल से भी 100 गुना अधिक पतले हैं।

(छवि: इंटरनेशनल बिजनेस मशीन्स कार्पोरेशन)

इंटेल और सैमसंग जैसी कंपनियों के वैज्ञानिक और इंजीनियर, कंप्यूटर चिप बनाने के लिए प्लाज्मा के विशिष्ट गुणों का इस्तेमाल किया है। वर्तमान में प्लाज्मा सूचना युग की सफलता के लिए अनिवार्य बन गया है। किसी भी सामान्य गैस, जैसे, हवा की मदद से प्लाज्मा को उत्पन्न किया जा सकता है। हवा में ऊर्जा देते हुए गैस परमाणुओं और अणुओं से इलेक्ट्रॉन अलग किये जाते हैं। इस प्रक्रिया से सामान्यतः परमाणुओं और अणुओं से इलेक्ट्रॉनों को अलग करने के लिए बिजली का उपयोग कर प्लाज्मा को उत्पन्न किया जाता है। इस प्रक्रिया में इलेक्ट्रॉन बहुत गरम हो जाते हैं, लगभग $12,000^{\circ}\text{C}$ से अधिक! ये गरम(ऊर्जावान) इलेक्ट्रॉन, गैस परमाणुओं और अणुओं से टकराते हैं, जिससे उनमें से कई टूटकर अलग हो जाते हैं और विद्युत रूप से आवेशित कणों को उत्पन्न करते हैं, जिसे आयन कहा जाता है। प्लाज्मा के सबसे सामान्य उदाहरणों में से एक फ्लोरेसेंट ट्यूब लाइट है। जब हम फ्लोरेसेंट ट्यूब लाइट को बंद करते हैं, तब यह आर्गन गैस और मरकरी से भरी हुई होती है। जब हम इस लाइट का स्विच चालू करते हैं, तब ट्यूब के भीतर की गैस प्रकाशमान प्लाज्मा में बदल जाती है। कम्प्यूटर चिप बनाने के लिए भी कई बार प्लाज्मा का इस्तेमाल किया जाता है। आगे हम यह समझेंगे की ये चिप कैसे बनती हैं।



कंप्यूटर चिप निर्माण के चरण

चिप एक परतदार केक के समान होती है

चिप एक परतदार(कई परतों वाली) केक के समान होती है - इसमें अगली परत लगाने से पहले प्रत्येक परत के अनावश्यक हिस्सों को हटा दिया जाता है। एक जटिल, परत-दर-परत तीन आयामी चिप संरचना कैसे बनाई जाती है? आरंभ में पदार्थ की एक पतली परत को जोड़ा जाता है और बाद में उसके अनावश्यक हिस्सों को हटाया जाता है। इस प्रक्रिया को कई बार दोहराया जाता है (चित्र 2)। सबसे पहले हम सिलिकॉन के एक समतल(फ्लैट) टुकड़े का इस्तेमाल करते हैं(a)। चित्र (b) में दिखाए अनुसार पूरी वेफर पर काँच की एक पतली परत को लगाया जाता है। बाद में, वेफर पर लाइट-सेंसिटिव फिल्म (फोटोरेसिस्ट) की एक परत को लगाया जाता है। फिल्म के अनावश्यक हिस्सों को हटाने के लिए लेसर लाइट का इस्तेमाल करते हैं। बची हुई फिल्म को मास्क कहा जाता है(c)। 'एच' (नक्काशी) प्रक्रिया के दौरान यह वेफर की सतह के हिस्सों के निकलने से बचाव करती है (d), जो की वाकई में प्लाज्मा प्रक्रिया है, जिसकी हम आगे चर्चा करेंगे। इस प्रकार एचिंग का अर्थ है नक्काशी या उत्कीर्णन।

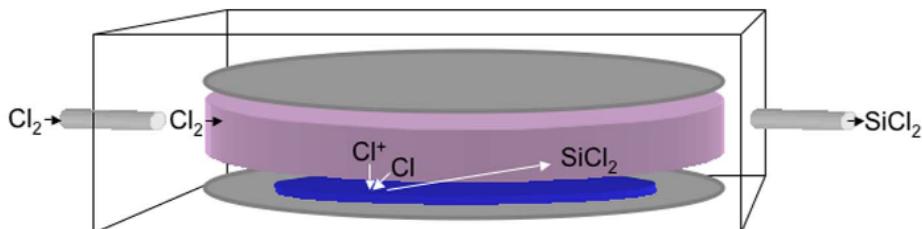
एक बार एचिंग प्रक्रिया पूरी होने के बाद मास्क को निकाला जाता है(e)। बाद में वेफर पर धातु की एक पतली परत को जमा करते हैं (f)। अंत में, धातु के तार और ग्लास इंसुलेशन की एक परत छोड़ वेफर के अतिरिक्त धातु को पॉलिश किया जाता है (g)। उस परत को ढकने के लिए ऊपर काँच की एक पतली परत लगाई जाती है, और सर्किट के तारों का एक जटिल त्रिआयामी नेटवर्क बनाते हुए इस पूरी प्रक्रिया को बार-बार दोहराया है। काँच में छोटे छेद की नक्काशी करके धातु से छेदों को भरकर, परतों को आपस में जोड़ा जाता है।

चिप के निर्माण में प्लाज्मा का उपयोग

इस प्रकार काँच और धातु की पतली परतों का जमाव करके चिप बनाई जाती है, बाद में प्रत्येक परत के उन हिस्सों को निकाल दिया जाता है, जो अंतिम चिप के लिए आवश्यक नहीं हैं।

लेकिन इस प्रक्रिया में प्लाज्मा का उपयोग कैसे किया जाता है? प्लाज्मा में विद्यमान कुछ आयनों और अणुओं के अंश वेफर की सतह के साथ रसायनिक प्रतिक्रिया करते हैं। प्लाज्मा के ये प्रतिक्रियाशील घटक, इंजीनियरों के लिए एक चिप की जटिल परतों को बनाने का कार्य संभव करते हैं।

अब हम यह देखते हैं कि किस प्रकार प्लाज्मा के प्रयोग से एक सिलिकन वेफर को एच (नक्काशी/उत्कीर्ण) किया जाता है। एक वैक्यूम चैम्बर में धातु की दो प्लेटों के बीच सिलिकन वेफर को रखा जाता है। प्लेटों के बीच की गैस को वैक्यूम पंप से निकाला जाता है और वैक्यूम चैम्बर के भीतर थोड़ी मात्रा में क्लोरीन गैस को छोड़ा जाता है। धातु की प्लेटें, एक उच्च वोल्टेज स्रोत से जुड़ी हैं, जो लगभग 10 mbar प्रति सेकण्ड चालू और बंद होता है। प्लेटों पर उच्च वोल्टेज के कारण क्लोरीन विद्युतीय आवेशित हो जाता है, और वेफर पर प्रत्यक्ष रूप से प्रकाशमान प्लाज्मा का निर्माण होता है। प्लाज्मा के कारण क्लोरीन के अणु टूटकर अलग होकर क्लोरीन परमाणु(Cl) और आयन(Cl⁺) में बदल जाते हैं। ये टुकड़े वेफर की सतह पर सिलिकन परमाणुओं से जुड़ जाते हैं और SiCl₂ गैस निर्मित करते हैं। इस प्रक्रिया में सिलिकन परमाणुओं को निकालते हुए प्लाज्मा से यह गैस बाहर पंप की जाती है। जैसा की उपरोक्त चरण (c) और (d) चित्र 2 में दर्शाया गया है, Cl परमाणुओं से सिलिकन सतह के हिस्सों का बचाव करने के लिए एक तैयार पैटर्न के अनुसार फोटोरेसिस्ट मास्क का इस्तेमाल किया जाता है, जो वेफर के निर्धारित क्षेत्रों को निकालने से रोकता है।



दो धातु प्लेटों(ग्रे) के बीच एक वैक्यूम चैम्बर में सिलिकॉन वेफर (नीला) का एक योजनाबद्ध रूप। प्लाज्मा को बैंगनी रूप में दिखाया गया है।

प्लाज्मा के उपयोग से वेफर पर पतली परतों को लगाना

एक चिप को बनाने के लिए अक्सर एक वेफर पर पतली परतों को लगाना पड़ता है। अब यह प्रक्रिया एचिंग के विपरित होगी। एक वेफर पर ठोस पदार्थ को लगाने के लिए गैस में परमाणु के तत्व होने चाहिए। उदाहरण के लिए, प्लाज्मा के इस्तेमाल से सिलिकन को लगाने के लिए सिलेन गैस (SiH₄) का उपयोग किया जा सकता है। प्लाज्मा में विद्यमान इलेक्ट्रॉन, SiH₄ का भंजन कर सिलिकन और हाईड्रोजन परमाणुओं में बदल देते हैं। सिलिकन, वेफर की सतह से चिपक जाती है, और अतिरिक्त हाईड्रोजन को प्लाज्मा से पंप किया जाता है। कुछ ही मिनटों में पूरी वेफर पर पदार्थ की ठोस परत का गठन करने के लिए सिलिकन परमाणु जमा हो जाते हैं।

बाद में सिलिकन की इस एकसमान परत को फोटोरेसिस्ट से पैटर्न देने की आवश्यकता होती है और उपयोगी उपकरणों को बनाने के लिए इसे एच(उत्कीर्ण) किया जाता है। यह ध्यान देने की बात है कि SiH₄ के बजाय हम अलग-अलग SiH_x यौगिक का प्रयोग कर सकते हैं, जहाँ x अलग-अलग अणुओं का प्रतिनिधित्व करते हुए विभिन्न मान का हो सकता है। एक बड़े व्यावसायिक विनिर्माण क्षेत्र में, वेफरों को इंसानों द्वारा नहीं, बल्कि रोबोट से नियंत्रित किया जाता है।

चिप, चालीस साल पहले और आज

लगभग चालीस साल पहले चिप कैसे बनाई जाती थी? निस्संदेह, इसके निर्माण के कई चरणों में प्लाज्मा के बजाय द्रव रसायनों या गरम गैसों का इस्तेमाल किया जाता था। उत्कीर्णन के लिए साधारण अम्लों(एसिड) का उपयोग किया जाता था। क्योंकि अम्ल, वेफर के अंदर ही नहीं बल्कि मास्क के भीतर भी उत्कीर्ण करता है। लेकिन बहुत छोटे सर्किट पैटर्न को उत्कीर्ण करने के लिए एसिड का प्रयोग करना असंभव है। जबकि प्लाज्मा सीधे वेफर में उत्कीर्ण कर सकता है, क्योंकि प्लाज्मा को ऊर्जा देने के लिए प्रयुक्त उच्च वोल्टता से प्लाज्मा से आयनों को सीधे वेफर पर त्वरित किया जा सकता है। इस प्रकार चिप अधिक परिष्कृत बन जाते हैं, और ट्रांजिस्टर्स के आकार भी काफी छोटे हो जाते हैं। इसके अलावा, रसायनिक प्रक्रियाओं की तुलना में प्लाज्मा का इस्तेमाल करने से निकलने वाले कचरे से नुकसान कम होता है, और इस प्रकार प्लाज्मा-आधारित निर्माण पर्यावरण के लिए बहुत कम हानिकारक होते हैं।

इलेक्ट्रॉनिक चिप के निर्माण में प्लाज्मा कैसे मदद करता है - इसके सिर्फ दो उदाहरणों पर हमने चर्चा की है। दरअसल, फोटोरेसिस्ट को पैटर्न देने के लिए आवश्यक लेसरों के भीतर प्लाज्मा का उपयोग किया जाता है और फोटोरेसिस्ट को वेफर से निकालने के लिए भी इनका उपयोग किया जाता है। प्लाज्मा, सिलिकन के विद्युत गुणों को सुधारने वाले डोपेन्ट आयनों का भी निर्माण कर सकता है, इस प्रकार से ट्रांजिस्टर्स बना सकते हैं। वर्तमान में एक कंप्यूटर चिप बनाने के लिए इस्तेमाल की जा रही विनिर्माण की लगभग आधी प्रक्रिया प्लाज्मा पर निर्भर है। इन महत्वपूर्ण प्लाज्मा तकनीकियों के कारण ही आज की आधुनिक तकनीकियाँ और उपकरण सुलभ हो गए हैं।

संदर्भ

1. <http://www.plasmacoalition.org>. a highly resourceful website on plasmas and their applications.
2. “Computer Chips and Plasma” by Jeffrey Hopwood (ibid.). The present article draws heavily on this article.
3. Image Courtesy: Microfabrication Laboratory, Northeastern University;

प्लाज़मा डिस्प्ले पैनल (प्रदर्शन फलक)

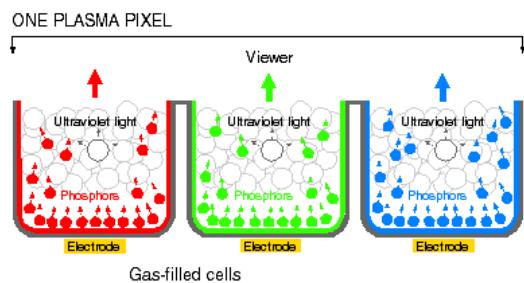
प्लाज़मा डिस्प्ले पैनल क्या है ?

आजकल बड़े आकार वाले प्लाज़मा डिस्प्ले और सपाट प्लाज़मा टेलीविजन बहुत ही लोकप्रिय हुए हैं। हालांकि बहुत से लोग प्लाज़मा शब्द का मतलब केवल डिस्प्ले पैनल ही समझते हैं। यह सच है कि प्लाज़मा डिस्प्ले बहुत ही चित्ताकर्षी होता है। दरअसल इन पैनलों के अंदर पदार्थ प्लाज़मा अवस्था में होते हैं, जो इनमें दिखने वाली रोशनी व छवि पैदा करते हैं। इसके अलावा हमारी रोजमर्रा की कई वस्तुओं में इनका इस्तेमाल होता है। वास्तव में प्लाज़मा एक प्रकार की गैस है, जिसमें बड़ी संख्या में विद्युत आवेशित कण होते हैं जो ऋणावेशित इलेक्ट्रॉन तथा धनावेशित आयन होते हैं। अधिकतर प्लाज़मा में बड़ी संख्या में अनावेशित कण भी होते हैं जिन्हें पृष्ठभूमि गैस कहते हैं। हमारे आस-पास ब्रह्मांड के अधिकतर क्षेत्र में प्लाज़मा है। डिस्प्ले पैनल में प्रयुक्त होने वाला प्लाज़मा प्रतिदीप्त बल्ब के प्लाज़मा के समान होता है जिसका उपयोग घरों में किया जाता है।



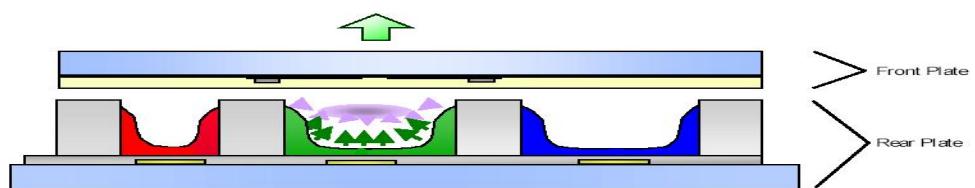
वर्तमान पी.डी.पी 80" के डायगनल स्क्रीनों और असंख्य विशिष्ट रंगों से युक्त हैं।

प्लाज़मा डिस्प्ले पैनल (पी.डी.पी) वास्तव में क्या है? पी.डी.पी छोटे-छोटे प्रतिदीप्त बल्बों का समूह है, जिनका आकार 1 मिमी के 10 वें भाग के करीब होता है। नजदीक से देखने पर प्रत्येक पी.डी.पी सेल को अलग-अलग पहचान सकते हैं। प्रकाश का लाल, हरा एवं नीला अंश साथ मिलकर एक छोटा पिक्सेल बनाता है एवं इन रंगों के अंश को उप पिक्सेल कहते हैं। प्रतिदीप्त बल्ब की तरह प्लाज़मा डिस्प्ले में दिखने वाला प्रकाश सीधे प्लाज़मा से नहीं आता बल्कि प्लाज़मा द्वारा उत्सर्जित पराबैंगनी किरणों के सेल्स की भीतरी दीवारों में किये गये फॉस्फर लेप से टकराने पर आता है। क्योंकि हर सेल अपना प्रकाश उत्सर्जित करता है, अतः इसे उत्सर्जन डिस्प्ले कहते हैं।



अलग-अलग प्लाज्मा पिक्सल
(Source: scvitalspeed.hubpages.com)

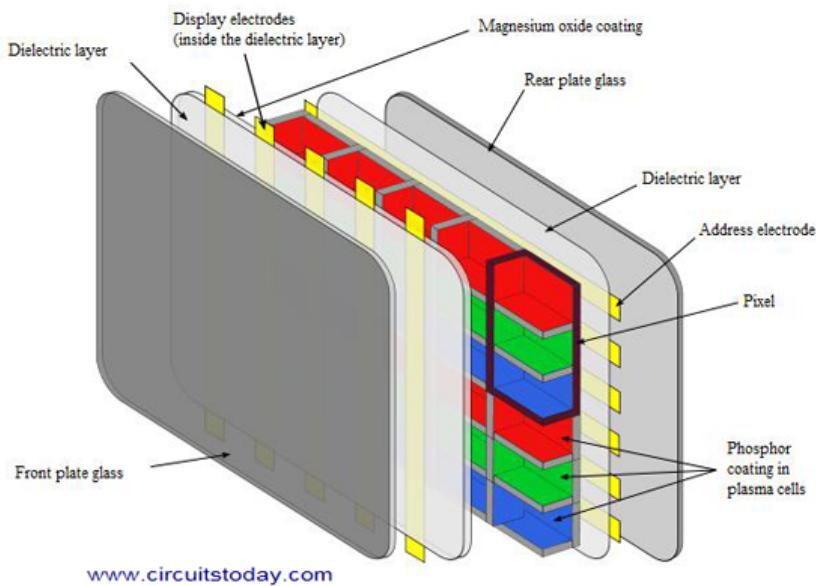
लेकिन यह सामान्य लिकिवड क्रिस्टल डिस्प्ले (एल.सी.डी) से कैसे भिन्न है? लिकिवड क्रिस्टल डिस्प्ले (एल.सी.डी) भी एक प्रकार का सपाट डिस्प्ले होता है। लेकिन इसमें क्रिस्टल के पीछे रखे प्लाज्मा बल्ब से प्रकाश निकलता है जिसमें छोटे-छोटे स्विचों की कतार के माध्यम से प्रकाश का नियंत्रण किया जाता है।



एड्स इलेक्ट्रोड गैस को प्लाज्मा अवस्था में बदलने का कारण बनता है। प्लाज्मा अवस्था में गैस (उत्सर्जन यूवी) निर्वहन क्षेत्र में फॉस्फोर के साथ प्रतिक्रिया करता है। प्रतिक्रिया प्रत्येक उपपिक्सेल को लाल, हरे, और नीले प्रकाश का उत्पादन करने के लिए कारण बनती है। (source: www.ee.buffalo.edu)

प्लाज्मा डिस्प्ले पैनल कैसे काम करता है

प्लाज्मा उत्पन्न करने के लिये ऊर्जा स्रोत की आवश्यकता होती है। प्रतिदीप्त बल्ब की तरह पी.डी.पी में भी प्लाज्मा उत्पन्न करने के लिये गैस से भरे एक रिक्त स्थान में विद्युत विभव लगाया जाता है। इलैक्ट्रोड्स पर लगाया गया विभव गैस अवस्था को प्लाज्मा अवस्था में परिवर्तित करता है। पी.डी.पी में प्रयुक्त प्लाज्मा को ठंडा प्लाज्मा कहते हैं, क्योंकि उसके चारों ओर ठंडी गैस होती है। जबकि इसके इलेक्ट्रॉन और आयन लगाये गये विभव से गर्म हो जाते हैं। जब ये गर्म इलेक्ट्रॉन उपस्थित गैस के अणु या परमाणु से टकराते हैं तो उन्हें ऊर्जा स्थानांतरित करते हैं। जिसके फलस्वरूप पराबैंगनी किरणें पैदा होती हैं। प्रदर्शन की परिचालन परिस्थिति, जैसे गैस की संरचना दाब, विभव, आकार आदि प्रदर्शन की जरूरतों जैसे, कम विभव, लम्बी आयु, ज्यादा चमक आदि को ध्यान में रखकर तय किया जाता है।



प्लाज्मा डिस्प्ले युनिट (योजनाबद्ध)

प्लाज्मा डिस्प्ले एक साधारण उपकरण होता है। इसमें दो समानांतर काँच की प्लेट होती है जिनके बीच की दूरी 1 मिमी के 10 वें हिस्से के लगभग परंतु निश्चित होती है जो किनारों पर जुड़ी होती हैं। प्लेटों के बीच का स्थान विरल गैसों के मिश्रण से भरा होता है, जिसका दाब वातावरण के दाब से थोड़ा कम होता है। पारदर्शी चालक पदार्थ की समानांतर पट्टी जिसकी मोटाई करीब 0.1 मिमी होती है, प्रत्येक प्लेट पर लेप की जाती है। एक प्लेट की पट्टियाँ दूसरी प्लेट की पट्टियों की अपेक्षा लम्बवत् दिशा में होती हैं। ये पट्टियाँ इलेक्ट्रोड होती हैं जिनमें विद्युत विभव लगाया जाता है। एक काँच की प्लेट के इलेक्ट्रोड की पंक्तियाँ तथा दूसरी काँच की प्लेट के इलेक्ट्रोड के स्तंभों के मिलन क्षेत्र पी.डी.पी की अलग-अलग रंगीन सेलों होती हैं। उच्च कोटि की छवि प्राप्त करने के लिये यह जरूरी है कि पराबैंगनी किरणें सेलों के बीच से न गुजरें। हरेक सेल को अलग-अलग करने के लिये सील करने से पहले एक प्लेट की अंदरूनी सतह में अवरोध बनाये जाते हैं। ये अवरोध उतार-चढ़ाव या मधुकोश द्रोणिका के आकार जैसे होते हैं। इन संरचनाओं में लाल, हरा तथा नीला फॉस्फर का लेपन होता है।



प्रत्येक सेल को अलग करने वाले अवरोधों के उदाहरण। प्रत्येक सेल की दीवारों के बीच की दूरी दो सौ माइक्रोमीटर है - या मनुष्य के बाल के व्यास का लगभग दस गुना

(Source: www.plasmacoalition.org)

पी.डी.पी का एक प्रमुख गुण यह है कि हर सेल के प्लाज्मा को अलग-अलग तेजी से ऑन या ऑफ करके उच्च गुणवत्ता का चल-चित्र पैदा किया जा सकता है (प्रत्येक सेल को ऑन या

ऑफ करने के लिये सेल के एक तरफ दो इलेक्ट्रोड और दूसरी तरफ तीसरा इलेक्ट्रोड लगा होता है। शुरुआती दौर में प्रभावी रूप से और सस्ते में अलग-अलग सेल को ऑन या ऑफ करना मुश्किल काम था लेकिन पिछले कुछ दशकों में इलेक्ट्रॉनिक्स में हुए विकास से यह काम सरल हो गया है।

व्यापारिक प्लाज़मा डिस्प्ले पैनल

एक व्यावसायिक पैनल कई लाख सेलों का बना होता है, जिसे काफी तेज रफ्तार से स्विचित करना होता है, जिससे 60 चित्र/सेकण्ड उत्पन्न हो सकें। संगणक की सहायता से छवि को ऑन और ऑफ विभव में परिवर्तित करके पल्स को इलेक्ट्रोड की कतार में लगाया जाता है। ये विभव पल्स इलेक्ट्रोड क्रम की चुनी हुई पंक्ति एवं स्तंभ पर लगाया जाता है, जिससे निर्धारित सेल में ही विभव पल्स लगे। इतना सूक्ष्म नियंत्रण प्लाज़मा की तेज गति की वजह से ही संभव होता है, जिससे विभव पल्स माइक्रोसेकण्ड (एक सेंकड़ का दस लाखवां भाग) में प्रतिक्रिया दे पाता है। दरअसल पिक्सेल को ध्यान में रखकर देखने से इसकी जटिलता समझी जा सकती है। हरेक पिक्सेल में तीन रंगीन सेल होते हैं और हर रंग में 256 तीव्रता स्तर होते हैं। इस प्रकार हर पिक्सेल 1.67 करोड़ ($256 \times 256 \times 256$) रंग प्रदर्शित कर सकता है। विद्युत विभव या धारा की मात्रा बदल कर एक विशेष सेल से प्रकाश की तीव्रता में परिवर्तन नहीं लाया जाता है। ऐसा एक छवि फ्रेम में उस विशेष सेल के ऑन रहने के समय में परिवर्तन करके किया जाता है। क्योंकि आँखों की अनुक्रिया छवि के बदलने की आवृत्ति से कम होती है इसलिये अलग-अलग रंग सेल के ऑन रहने तक लगातार दिखाई देते हैं। यह कहा जा सकता है कि लगभग सभी कंपनियाँ जो पी.डी.पी का विकास और निर्माण कार्य कर रही हैं, उन्होंने स्विच प्रणाली को अच्छा बनाने, उसकी गति बढ़ाने तथा कार्यक्षमता में वृद्धि करने में अपना योगदान दिया है।

पचास साल की यात्रा

आज बाजार में जो प्लाज़मा डिस्प्ले पैनल उपलब्ध है वे कई वर्षों के अनुसंधान और विकास, एवं इलेक्ट्रॉनिक्स तथा उत्पादन तकनीक में उन्नति की वजह से हैं। यह रोचक तथ्य है कि सन् 1964 में अमेरिका के इलिनॉ विश्वविद्यालय के वैज्ञानिकों ने पी.डी.पी की खोज की। यह एक रंगीय पी.डी.पी था। 1980 के दशक में बहुरंगीय पी.डी.पी. पर तेजी से अनुसंधान हुआ एवं पहला रंगीन व्यावसायिक पी.डी.पी बाजार में 1999 दशक के आखिर में आया। आजकल 80 इंच (1200 सेमी.) आकार के और 3-4 इंच 8-10 सेमी. मोटे पी.डी.पी का निर्माण करना संभव है। पी.डी.पी. में ऊर्जा खपत कम करने तथा उनकी क्षमता और जीवनकाल बढ़ाने में महत्वपूर्ण विकास हुआ है।

भविष्य की चुनौती

बड़े पर्दे, उत्कृष्ट एवं चमकदार छवि और 160° के कोण तक स्पष्ट चित्र देखना आज के प्लाज़मा पैनल की विशेषता है। ये प्लाज़मा पैनल एकदम सपाट और चमकदार वातावरण में भी

अच्छा कार्य करते हैं। कम कीमत के पी.डी.पी पैनल को उत्पादित करना उत्पादकों के लिये चुनौती है जो व्यवसायिक सफलता का मानक है। पिछले कुछ वर्षों में इनकी कीमतों में काफी गिरावट आयी है। नयी संरचनाएँ और प्रक्रियाएँ लगातार लागू किए जाने से उत्पादन दाम में निरंतर कमी आ रही है। पी.डी.पी. निश्चित तौर पर भविष्य में बड़े पर्दे वाला डिस्प्ले पैनल होगा।

संदर्भ

1. <http://www.plasmacoalition.org>: a highly resourceful website on plasmas and their applications.
2. Plasma Display panels by Leanne Pitchford in plasmacoalition.org
3. Introduction to plasma Display Panels (PPT) by Ching Wei-Bau in www.ee.buffalo.edu

प्लाज्मा से वेल्डिंग

प्लाज्मा दुनिया को संगठित रखता है

ऐसा कहा जाता है कि प्लाज्मा दुनिया को संगठित रखता है। शायद यह अतिश्योक्ति लगे, लेकिन ऐसा नहीं है। ज्यादातर वस्तुओं का निर्माण धातु को धातु के साथ जोड़कर किया जाता है- जैसे मोटरवाहन, समुद्री जहाज, हवाई जहाज, रेलगाड़ी, घर का ढांचा, पुल इत्यादि। इनमें से बहुत से जोड़ प्लाज्मा के उपयोग से किये जाते हैं।

महा विस्फोट (बिग-बैंग) के बाद से ही हम प्लाज्मा से घिरे हुए हैं। सूर्य, तारें, तड़ित विद्युत, उत्तर ध्रुवीय ज्योति से प्रकाश प्लाज्मा द्वारा उत्पन्न होते हैं। बैंजामिन फ्रैक्टिलिन(1706-1790) ने पहली बार तड़ित विद्युत का अध्ययन किया और यह निष्कर्ष निकाला कि यह आवेशित कणों (इलेक्ट्रॉन और आयन) से मिलकर बना होता है। जबकि उस समय इलेक्ट्रॉन और आयन की खोज भी नहीं हुई थी। इसके लगभग ढाई सौ वर्ष बाद हम प्लाज्मा की ताकत को उपयोगी कार्यों में लगा पाने में सक्षम हुए हैं। प्लाज्मा एक गैस है जिसमें बड़ी संख्या में धनावेशित और ऋणावेशित कण होते हैं। प्लाज्मा में ऊर्जा को कई प्रकार से सान्द्र तथा केंद्रित करने की क्षमता होती है।

प्लाज्म आर्क

पहला मानव निर्मित प्लाज्मा स्थिर विद्युत से उत्पन्न चिनगारी में धड़ाके से बना। पहला कृत्रिम उच्च शक्ति प्लाज्मा सर हमफ्री डेवी(1728-1829) द्वारा उन्नीसवीं सदी के प्रारम्भ में उत्पन्न किया गया। यह ध्यान देने की बात है कि हमफ्री डेवि ने पहली बार विद्युत आर्क शब्द का प्रयोग किया। उनके दिमाग में यह शब्द कैसे आया? उनकी प्रयोगशाला में उत्सर्जित चमकीला प्रकाश एक तोरण(arch) जैसा दिखाई दिया जब दो समानांतर इलेक्ट्रोड्स के बीच स्थित वायु विद्युत धारा के बढ़ने से गर्म होकर उपर की ओर उठने लगी। इस प्रकार आर्च से आर्क शब्द आया। लेकिन आसानी से बिजली उपलब्ध नहीं होने के कारण 19 वीं शताब्दी के अंत तक औद्योगिक रूप से विद्युत चाप और प्लाज्मा का उपयोग संभव नहीं हो सका।



एक वेल्डिंग हेलमेट और ज्वाला रक्षक कपड़ों से स्पार्क्स, गर्मी और पराबैंगनी किरणों से वेल्डर को बचाया जाता है

धातुओं को जोड़ना

वेल्डिंग(झलाई) दो पदार्थों या धातुओं को जोड़ने की प्रक्रिया है, जिसमें सामान्यतः दोनों को पिघलाकर जोड़ा जाता है। मूल धातु को पिघलाने के साथ-साथ एक पूरक फिलर पदार्थ भी मिलाया जाता है। जो पिघले हुए पदार्थ से मिलकर जोड़ क्षेत्र में पूरी तरह बहकर ठंडा होने पर मजबूत जोड़ बनाता है। यह जोड़ क्षेत्र मूल पदार्थ की तरह ही मजबूत होता है। झलाई करने के लिए कभी-कभी ताप के साथ दाब भी लगाया जाता है। वैसे कम ताप पर धातुओं को जोड़ने के लिए टंकाई (सोल्डरिंग) पद्धति में मूल धातु पिघलता नहीं है।

धातुओं को जोड़ने के लिए कई प्रकार के ऊष्मा स्रोत का उपयोग किया जाता है। गैस वेल्डिंग में ऊष्मा के लिए एलपीजी, प्राकृतिक गैस या ऑक्सीजन गैस व एसिटिलीन को जलाकर लौ पैदा की जाती है। प्रतिरोधक वेल्डिंग में पदार्थ के माध्यम से विद्युत धारा प्रवाहित कर ऊष्मा पैदा की जाती है। वेल्डिंग के लिए लेसर किरणों का भी उपयोग किया जाता है। विद्युत चाप वेल्डिंग में गैस को आयनित करके चाप पैदा किया जाता है।

विद्युत चाप वेल्डिंग

विद्युत चाप एक गोचर(विजिबल) प्लाज्मा निर्वहन (डिस्चार्ज) है, जो दो इलेक्ट्रोडों के बीच स्थित गैस को विद्युत धारा के प्रवाह से आयनित करने पर उत्पन्न होता है। सतत विद्युत चाप के कारण प्रतिरोधी गर्मी उत्पन्न होती है जिससे गैस अणु आयनित हो जाते हैं और गैस प्लाज्मा में परिवर्तित हो जाती है। क्योंकि प्लाज्मा में इलेक्ट्रॉन सहजता से चलता है, अतः प्लाज्मा काफी अधिक मात्रा में विद्युत धारा वहन कर सकता है और विद्युत ऊर्जा को बहुत कम क्षेत्र में संकेन्द्रित कर सकता है। इस प्रकार प्लाज्मा धातुओं को पिघलाने का एक प्रभावी स्रोत है। विद्युत चाप वेल्डिंग में प्लाज्मा ऊर्जा स्रोत का काम करता है जिससे उच्च ताप (6000° सें.ग्रेड) पर धातुएँ पिघल जाती हैं जिसे जोड़ने अथवा काटने का काम किया जाता है।

आजकल बड़ी मात्रा में स्टील का उत्पादन विद्युत चाप भट्टी में पिघलाकर होता है। विद्युत चाप भट्टी में कितनी ऊर्जा संकेन्द्रित होती है? एक हजार भारतीय घरों में खपत होने वाली बिजली की मात्रा को एक फुटबॉल आकार के क्षेत्र में संकेन्द्रित किया जाता है जो 100 टन स्टील को आधे घंटे में पिघला सकती है। छोटे स्तर पर इस प्रकार का विद्युत चाप दो धातुओं को एक साथ जोड़ने के काम आता है।

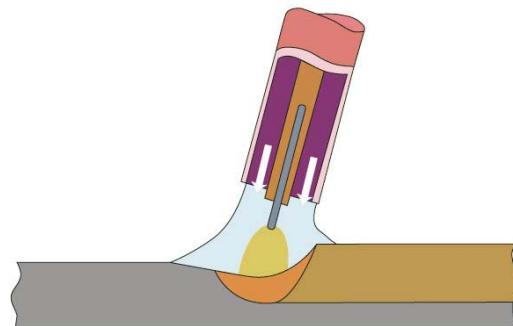
चाप वेल्डिंग में, एक इलैक्ट्रोड को विद्युत ऊर्जा स्रोत के एक सिरे से जोड़ा जाता है और दूसरा सिरा जिस धातु को वेल्ड करना होता है उससे जोड़ा जाता है। वेल्डर इलैक्ट्रोड की नोक को इस धातु से स्पर्श करता है और दूर ले जाता है ताकि इलैक्ट्रोड और धातु के बीच लगभग 1 मिमी का अंतर रखा जा सके। विद्युत ऊर्जा का विभव विद्युत धारा के द्वारा इस अंतर को भरता है(चित्र 2)। धारा हवा को प्लाज्मा में परिवर्तित करती है जो बहुत तीव्रता का प्रकाश उत्पन्न करता है।

इसे चाप वेल्डिंग कहते हैं। वेल्डर को इस तीव्र प्रकाश से अपनी आंखों को बचाना होता है। इससे बचाव के लिये वेल्डर हेलमेट पहनता है जिससे प्रकाश का बहुत छोटा भाग ही उसकी आंखों में प्रवेश कर पाता है।

प्लाज्मा चाप वेल्डिंग

प्लाज्मा चाप वेल्डिंग की प्रक्रिया भी विद्युत चाप वेल्डिंग के समान होती है। लेकिन इसमें एक अतिरिक्त अक्रिय गैस का प्रयोग किया जाता है, जिससे प्लाज्मा चाप उत्पन्न होता है। पहले विद्युत चाप उत्पन्न किया जाता है जो अक्रिय गैस को आयनित करके प्लाज्मा में परिवर्तित करता है। इस प्रक्रिया से उत्पन्न ऊष्मीय ऊर्जा और ताप पारम्परिक चाप प्रक्रिया से कहीं ज्यादा होता है (इस कारण बहुत मोटी धातु की प्लेट को जोड़ना और काटना संभव हो पाता है।) वास्तव में सभी वेल्डिंग चाप (आंशिक आयनित) प्लाज्मा होते हैं, परंतु प्लाज्मा चाप वेल्डिंग एक संकुचित चाप प्लाज्मा है।

ज्यादातर पदार्थों को आर्गन, हीलियम, आर्गन+हार्ड्रोजन और आर्गन+हीलियम, अक्रिय गैसों या गैस मिश्रणों से जोड़ा जा सकता है। आर्गन का मुख्य: रूप से प्रयोग होता है। अकेले आर्गन के इस्तेमाल की अपेक्षा आर्गन और हार्ड्रोजन का मिश्रण ज्यादा ऊष्मीय ऊर्जा प्रदान करता है जो उच्च चाप धातुओं और स्टेनलैस स्टील को भी जोड़ने में सहायक होता है। काटने के लिये आर्गन और हार्ड्रोजन (10-30%) या नाईट्रोजन का उपयोग किया जा सकता है।



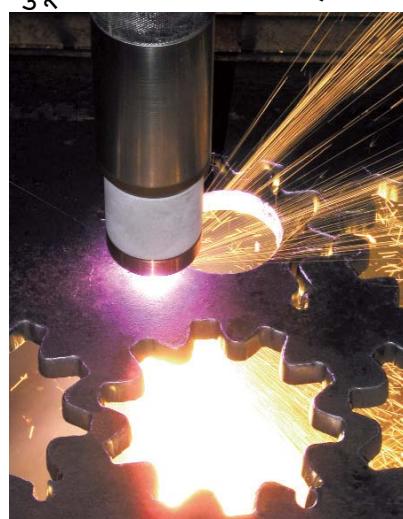
वेल्ड करने के लिए इलेक्ट्रोड और धातु के बीच के अंतर को विद्युत धारा से मिलाया जाता है

उच्च क्षमता वेल्डिंग प्लाज्मा में सभी कण - इलेक्ट्रॉन, धनावेशित आयन और अनावेशित कण लगभग समान तापमान पर होते हैं। प्लाज्मा का ताप 6000°C डिग्री से भी ज्यादा हो सकता है। यह ताप सभी ज्ञात पदार्थों के गलनांक से कहीं ज्यादा है। जो भी पदार्थ इस प्लाज्मा के संपर्क में आता है, वो निश्चित रूप से पिघलता है या वाष्पित हो जाता है। जिन धातुओं को जोड़ना होता है उनके किनारे पर तरल क्षेत्र बन जाता है। इलेक्ट्रोड की नोक भी पिघल जाती है और परिणाम स्वरूप तरल धातु वेल्ड क्षेत्र में तरल के रूप में जाती है और उससे जुड़ जाती है और ये क्षेत्र बड़ा हो जाता है। जैसे ही चाप को हटाया जाता है वेल्ड क्षेत्र ठंडा होता है और जम जाता है। पिघले हुए इलैक्ट्रोड पदार्थ को फिलर पदार्थ कहते हैं क्योंकि ये जुड़ने वाले धातुओं के अंतर को भरता है। पुल, इमारतें बनाने के लिये हजारों टन फिलर पदार्थ उपयोग में आता है।

विद्युत चुम्बकीय बल चाप में प्लाज्मा जेट उत्पन्न करता है जो कि इलेक्ट्रोड की नोक पर होता है। ये जेट लगभग 800 किमी/घंटे के वेग से प्रवाहित होता है। इस प्लाज्मा जेट की क्षमता गुरुत्व बल से ज्यादा होती है और इलेक्ट्रोड की नोक पर स्थित पिघले हुए पदार्थ को वेल्ड क्षेत्र में ले जाता है। यह बल सान्द्र चाप बनाता है जिससे वेल्डर ऊष्मीय ऊर्जा को दिशा दे पाता है। क्योंकि इलेक्ट्रोड झुका हुआ है और किसी भी कोण या स्थिति पर, यहाँ तक की ऊपर की ओर भी मोड़ा जा सकता है। जेट, तरल पदार्थ को वायुमंडलीय हवा से ऑक्सीकरण होने से भी रक्षा करता है। यह पिघले वेल्ड क्षेत्र को हटाकर गहरा और मजबूत जोड़ बनाता है। प्लाज्मा की तीव्र ऊष्मा द्वारा उत्पन्न दाब 100 मी. गहरे पानी के दाब से भी ज्यादा होता है। इसकी वजह से चाप वेल्डिंग को समुद्र के अंदर, ऑयल रिंग और जहाजों की मरम्मत में उपयोग किया जा सकता है।

धातु को काटना

प्लाज्मा चाप प्रक्रिया से किसी भी धातु को तेजी से काटा जा सकता है और ये प्रक्रिया किफायती भी है। आगे इस प्रक्रिया को समझाते हैं। ज्यादतर वेल्डिंग खुले वातावरण में की जाती है। तथापि, तीव्र चाप को कॉपर केविटी में उत्पन्न किया जा सकता है और इस केविटी को पानी या हवा से ठंडा किया जाता है। प्लाज्मा को सीमित क्षेत्र में गर्म और विस्तारित किया जाता है, केविटी में स्थित छिद्र से यह खुले वायुमंडल में उत्पन्न चाप से भी तीव्र गति से वातावरण में प्रवेश करता है। यह तीव्र वेग और सघन प्लाज्मा धातु को बहुत जल्दी पिघला देता है। इस प्लाज्मा के प्रवाह से न केवल धातु तीव्र गति से पिघलती है बल्कि यह बलपूर्वक पिघली हुई धातु को बाहर निकालता है, जिसे बाद में तेजी से काटा जाता है। नाईट्रोजन प्लाज्मा से 8 सेमी मोटी धातु प्लेट को 35 सेमी/ मि. की गति से काटा जा सकता है। ऑक्सीजन प्लाज्मा से 1 सेमी मोटी स्टील को 4 मीटर प्रति मिनट की गति से काटा जा सकता है। पतली प्लेट्स को 6 मीटर प्रति मिनट की गति से काटा जा सकता है। यहाँ हमें विशेष रूप से ध्यान देना होगा कि बड़े स्तर की उत्पादन सुविधाओं में, धातुओं को पानी के अंदर (कुछ से.मी नीचे) काटा जाता है। ऐसा करने से धुएँ से होने वाले प्रदूषण को नियंत्रित किया जा सकता है और प्लाज्मा द्वारा धातु काटने की प्रक्रिया को सबसे अधिक पर्यावरण अनुकूल बनाया जा सकता है।



प्लाज्मा को उच्च वेग पर धातुओं को काटने के लिए इस्तेमाल किया जा सकता है

धातु संरचना निर्माण में प्लाज्मा के माध्यम से क्रांतिकारी बदलाव

प्लाज्मा चाप के उपयोग से दोनों धातुओं को जोड़ने और काटकर अलग करने के गुण से पुल, इमारत, पाइपलाइन, ऊर्जा उत्सर्जन सुविधा, मोटरगाड़ी, ट्रक, जहाज और हवाईजहाज आदि बनाने में क्रांतिकारी बदलाव आया है। हम इन सभी धातु संरचनाओं का निर्माण बहुत तेजी से, सुरक्षित रूप में और बड़ी संख्या तथा आकार में कर सकते हैं जो अन्यथा संभव नहीं था। किसी अन्य प्रक्रिया की तुलना में प्लाज्मा ज्यादा दक्षतापूर्वक काम करता है और मानव निर्मित दुनिया में कई निर्माण कार्य में इसका उपयोग किया जा रहा है।

संदर्भ

1. <http://www.plasmacoalition.org>. a highly resourceful website on plasmas and their applications.
2. <http://web.mit.edu/3.37/www/>; Plasmas for Welding by Thomas Eagar. The present article draws heavily on this article.
3. H.B. Cary, Modern Welding Technology, 2nd Edition, Prentice Hall, 1989; A.C.
4. R.J. Sacks and E.R. Bohnart, Welding:Principles and Practices, 3d Edition, McGraw Hill, 2005
5. www.plasmaindia.com, Plasma Processing Update,
6. FCIPT (IPR), Newsletter Vol. 69 (2014)

चिकित्सा क्षेत्र में प्लाज्मा

चिकित्सा क्षेत्र में प्लाज्मा

आपको यह अनुभव हुआ होगा कि त्वचा के कटने पर या घाव से खून निकलने की स्थिति में खून का बहाव रुकने में थोड़ा समय लग जाता है क्योंकि खून के जमने में वक्त लगता है। लेकिन क्या आप कल्पना कर सकते हैं कि घाव से बहते हुए खून पर हीलियम की ठंडी हवा डालने से वह सामान्य की अपेक्षा जल्दी जम जाए (चित्र 1) और इससे घाव बहुत तेजी से भर भी जाए। निश्चित रूप से यह काफी अजीब और अवास्तविक लगता है। परन्तु प्लाज्मा विज्ञान, सूक्ष्म जीवविज्ञान, जैव-रसायन तथा चिकित्सा क्षेत्र के जानकार वैज्ञानिक वास्तव में ऐसा ही कुछ बनाने का काम कर रहे हैं। असल में वे हीलियम गैस का प्रयोग न करके उसकी प्लाज्मा अवस्था का प्रयोग कर रहे हैं।



त्वचा को नुकसान पहुँचाए बगैर घाव को कीटाणुमुक्त करने के लिए त्वचा के संपर्क में शीत प्लाज्मा

जैसा कि हम जानते हैं, प्लाज्मा पदार्थ की चौथी अवस्था है, अन्य तीन ठोस, द्रव एवं गैस हैं। हम प्लाज्मा को कैसे उत्पन्न कर सकते हैं ? यदि एक गैस को गरम किया जाए या उस पर उच्च विद्युत क्षेत्र लगाया जाए तो उसमें उपस्थित इलेक्ट्रॉनों की ऊर्जा त्वरित होकर काफी बढ़ जाती है। जब ये इलेक्ट्रॉन पृष्ठभूमि गैस के अणुओं व परमाणुओं से टकराते हैं, तो कुछ और इलेक्ट्रॉनों को मुक्त करने में सक्षम हो जाते हैं। जिन अणुओं से एक या अधिक इलेक्ट्रॉन निकल जाते हैं, उन्हें आयन कहा जाता है। ये मुक्त हुए इलेक्ट्रॉन गैस में लगाए गये विद्युत क्षेत्र के प्रभाव में आकर त्वरित होकर दूसरे अणुओं से टकराते हैं, और इस प्रक्रिया में फिर से आयनों तथा इलेक्ट्रॉनों का निर्माण होता है। अनावेशित अणुओं, परमाणुओं, आयनों तथा इलेक्ट्रॉनों के इस मिश्रण को प्लाज्मा कहा जाता है। प्लाज्मा बहुत गरम या फिर बहुत ठंडे हो सकते हैं - जैसे महाविस्फोट (बिंग-बैंग) के शुरू में पदार्थ की अवस्था थी, या फिर प्रयोगशाला में संघनित पदार्थ की तरह। चिकित्सा के लिए उपयोगी प्लाज्मा का तापमान कम से कम इतना होता है जिससे प्रभावी उपचार के लिए आवश्यक प्रकार के अणुओं और परमाणुओं का उत्पादन किया जा सके, साथ ही इससे त्वचा को कोई हानि न पहुँचे।

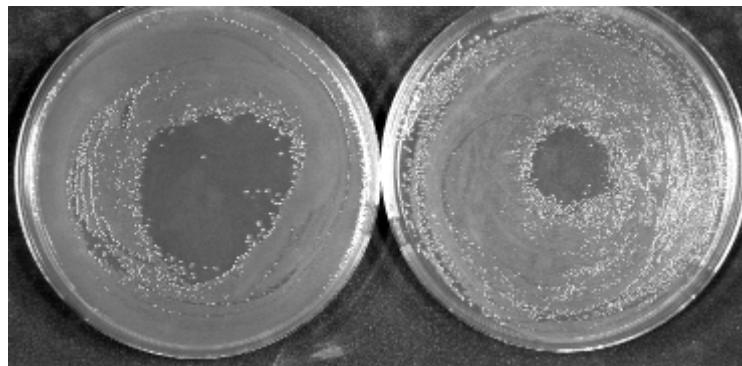
प्लाज्मा तथा जीवित ऊतक

पिछले कुछ वर्षों में चिकित्सा के क्षेत्र में निम्न ताप प्लाज्मा के उपयोगों पर काफी तेजी से शोध हुआ है, जिससे प्लाज्मा अब स्वास्थ्य सेवाओं में प्रवेश करने की स्थिति में है। वैज्ञानिकों ने प्लाज्मा का प्रयोग जीवित ऊतकों में से रोगाणुओं को निष्क्रिय करने (बैक्टीरिया, वायरस या अन्य सूक्ष्मजीवियों जैसे रोगकारक), स्वस्थ ऊतकों को हानि पहँचाए बिना रक्तसाव रोकने, घावों को कीटाणुरहित करके उन्हें तेजी से भरने और यहाँ तक कि कुछ केंसर कोशिकाओं को मारने के लिए भी किया है। प्लाज्मा ये सब उपचार कैसे करते हैं? प्लाज्मा हाइड्रॉक्सिल (OH) तथा आण्विक ऑक्सीजन (O) जैसे प्रतिक्रियाशील रासायनिक अणुओं का निर्माण करते हैं, जो ऑक्सीकरण के माध्यम से हानिकारक बैक्टीरिया को मार सकते हैं। यह महत्वपूर्ण है क्योंकि कोशिका की डिल्ली का गठन करने वाले लिपिड एवं प्रोटीन के ऑक्सीकरण से डिल्ली का पूर्णतया विघटन हो सकता है।

चिकित्सा उपकरणों में जीवाणुनाशन (स्टरीलाइजेशन)

वैज्ञानिकों ने पाया है कि बैक्टीरिया प्लाज्मा द्वारा बनाए गये कड़े वातावरण का सामना नहीं कर सकते। उन्होंने पाया है कि चन्द मिनटों या सेकण्डों में ही बैक्टीरिया बड़ी संख्या में मारे जाते हैं, और यह बैक्टीरिया की नस्ल पर निर्भर करता है। प्लाज्मा के इसी गुण का इस्तेमाल करके ऐसे प्लाज्मा उपकरण बनाए गये हैं जो चिकित्सा औजारों को नुकसान किए बिना जीवाणुमुक्त कर सकते हैं।

आजकल अनेक चिकित्सा उपकरण ऐसे पॉलीमरों से बने होते हैं जो तापसंवेदक होते हैं और पारंपरिक साधनों जैसे ऑटोक्लेविंग से जीवाणुमुक्त नहीं किए जा सकते। ऑटोक्लेविंग में जीवाणुओं का नाश करने के लिए उच्च दाब पर गर्म वाष्प का प्रयोग किया जाता है। प्रतिक्रियाशील वर्ग के अणुओं और परमाणुओं से बना प्लाज्मा सामान्य तापमान पर शल्य औजारों एवं चिकित्सा उपकरणों की सतह पर जमे बैक्टीरिया, वायरस तथा फन्गस को तेजी से मार सकता है, यहाँ तक की ताप संवेदी पॉलीमर से बने उपकरणों को भी। इन प्लाज्मा किस्मों को अक्सर एक गैस प्रवाह में रखा जाता है, जिससे वह संकीर्ण और जटिल संरचनाओं में भी प्रवेश कर सके। कम से कम शरीर से संपर्क हो, ऐसी शल्य चिकित्सा में काम आने वाले उपकरण इसी प्रकार के होते हैं। शीत गैस प्लाज्मा के विशेष गुणों के कारण प्रियोन (Prion) जैसे अत्यधिक संक्रामक कारकों से मैड-काऊ नामक बीमारी के फैलने से हमें सुरक्षा मिलती है, प्रियोन संरचनात्मक रूप से एक टेढ़ा-मेढ़ा प्रोटीन है, जिसपर सभी व्यावसायिक परिशोधन पद्धतियाँ बेअसर हैं।



इ.कोलाई कोशिकाओं की पेट्रो-डिशों को 120 सेकण्ड के लिए शीत प्लाज्मा से उपचार किया गया(बाएँ-हीलियम + 0.75% O₂ तथा दाएँ - सिर्फ हीलियम)। केन्द्र का काला वृत्त 'मरण-क्षेत्र'(किल-जोन) है, जहाँ बैकटीरिया की कोशिकाएँ नष्ट हो गई हैं और उनकी वृद्धि रुक गई है।

प्लाज्मा का एक उल्लेखनीय गुण

प्रतिक्रियाशील प्लाज्मा वर्ग जीवों व वनस्पति ऊतकों को बहुत कम या सहनीय नुकसान पहुँचाती हैं, परन्तु वह बैकटीरिया कोशिकाओं को नष्ट कर देता है। ऐसा कैसे हो सकता है? बैकटीरिया एवं स्तनधारी कोशिकाओं में रासायनिक एवं भौतिक दबाव का प्रभाव अलग होता है, जैसा कि शीत गैस प्लाज्मा उपचार में होता है। परिणामस्वरूप त्वचा की फाइब्रोब्लास्ट कोशिकाएँ, जिनसे संयोजी ऊतकों का निर्माण होता है, प्लाज्मा की उपस्थिति में भी जीवन-सक्षम रहती हैं, परन्तु इ.कोलाई बैकटीरिया कोशिकाओं के लिए घातक होती है। वनस्पति और जीवों के ऊतकों को नुकसान पहुँचाए बिना बैकटीरिया को नष्ट करने की प्लाज्मा की यह क्षमता ही विभिन्न उपयोगी कार्यों के विकास की कुंजी है जैसे खाद्य-परिशोधन, त्वचा किटाणुशोधन एवं ट्यूमर अपचयन आदि।

कीमोथेरेपी की तरह ही, शीत प्लाज्मा उपचार से केंसर कोशिकाएँ योजनाबद्ध तरीके से नष्ट हो जाती हैं तथा उनकी तीव्रता से वृद्धि रुक जाती है, साथ ही जीवित स्वस्थ ऊतकों का नुकसान बहुत कम होता है। अंततः इस पद्धति की सफलता इस बात पर निर्भर करेगी कि प्रतिक्रियाशील प्लाज्मा की उपयुक्त नस्लों को ढूँढकर उन्हें मानव शरीर के रोग वाले अंग में प्रभावी ढंग से पहुँचाया जाए। ऐसी आशा है कि आज की विषम चिकित्सा चुनौतियों का समाधान करने के लिए शीत-गैस प्लाज्मा पद्धतिओं का विकास किया जाएगा।

कुछ चेतावनियाँ

काफी उच्च मात्रा में प्लाज्मा रोगजनकों को नष्ट कर सकता है, परन्तु कम मात्रा में यह कोशिकाओं का गुणन तेज भी कर सकता है। यह गुण घाव भरने की प्रक्रिया में एक महत्वपूर्ण पहलू है। प्लाज्मा की बैकटीरिया मारने की क्षमता तथा कुछ स्वस्थ कोशिकाओं की वृद्धि में तेजी लाने की क्षमता के कारण इसे "प्लाज्मा किल/प्लाज्मा हील" प्रक्रिया के नाम से जाना जाता है। अतः वैज्ञानिकों ने घाव भरने के लिए शीत प्लाज्मा के उपयोग पर शोध करना शुरू किया, विशेष

रूप से डायबिटिक अल्सर जैसे पुराने घावों पर, जहाँ पारंपरिक चिकित्सा पद्धतियां बेअसर होती हैं। हर वर्ष भारत में लाखों अंगविच्छेद सिर्फ इसी कारण होते हैं, क्योंकि पारंपरिक चिकित्सा पद्धतियाँ ऐसे घावों को ठीक करने में सक्षम नहीं हैं। हालांकि प्लाज्मा आधारित प्रौद्योगिकी अभी अनुसंधान चरण में है, प्रारंभिक परीक्षणों में कुछ पुराने घावों के क्षेत्र में सफल उपचार के लक्षण देखे गये हैं।



प्लाज्मा का उपयोग प्लाक, दाँत क्षय, और मसूड़ों की अन्य बीमारियों को नियंत्रित करने के लिए किया जा सकता है।

दंत चिकित्सा में प्लाज्मा

एक और रोमांचक विकास दंत चिकित्सा के क्षेत्र में हुआ है जिसमें शीत प्लाज्मा का उपयोग किया जाता है, वो है दंत चिकित्सा। प्लाज्मा मौखिक बायोफिल्म (जिसे आम-तौर पर slime के नाम से जाना जाता है) को नियंत्रित करने का एक प्रभावी तरीका है। यह एक अत्यंत संगठित जीवाणु समुदाय है, जो सूक्ष्मजीवों को आपसी संपर्क में रखकर संसाधनों को बढ़ाने तथा समुदाय की अखंडता की रक्षा करता है। दांतों के ऊपर जमने वाला प्लाक मौखिक बायो-फिल्म का एक उदाहरण है। यह दंत क्षय तथा मसूड़ों के रोगों जैसे जिन्जवाइटिस (मसूड़ों के ऊतकों में सूजन) तथा पेरियोडॉनटिस (दाँतों को सहारा देनेवाले ऊतक - पेरियोडॉनशियम में सूजन) का प्रमुख कारण है। प्रयोगों में यह पाया गया है कि प्लाज्मा दंत क्षय करने वाले जीवाणुओं को निष्क्रिय करके पेरियोडॉन्टल रोगों को नियंत्रित करता है (चित्र 3)। डेन्टिन (दाँत के इनेमल के नीचे की कैल्सीफाईड ऊतक संरचना) में प्लाज्मा का प्रयोग करने पर संक्रमण कम होने का पता चला था। प्लाज्मा दंत गुहा में से संक्रमित ऊतकों को बाहर निकाल सकता है। इस प्रकार प्लाज्मा एक दिन दंत चिकित्सकों की डरावनी ड्रिल की जगह ले सकता है। इन हाल के विकास कार्यों से संकेत मिलता है कि वह दिन ठूं नहीं है जब प्लाज्मा आधारित उपकरण दंत विशेषज्ञों को उपलब्ध होंगे और वे मुँह संबंधी बीमारियों का उपचार प्रभावशाली तरीके से कर सकेंगे, जिससे रोगियों को सिर्फ हल्का दर्द ही महसूस हो।

संदर्भ

1. <http://www.plasmacoalition.org>: Plasma Medicine
by Mounir Laroussi ; Images: Mounir Laroussi; istockphoto.com

2. M. Laroussi, "Low Temperature Plasmas for Medicine?", IEEE Trans. Plasma Sci., Vol. 37, No. 6, pp. 714-725, 2009
3. M. G. Kong, G. Kroesen, G. Morfill, T. Nosenko, T. Shimizu, J. van Dijk and J. L. Zimmermann, "Plasma Medicine: An Introductory Review", New J. Physics, Vol. 11, 115012, 2009.
4. Gregory Fridman, Gary Friedman, Alexander Gutsol, Anatoly B. Shekhter, Victor N. Vasilets, Alexander Fridman,
Applied plasma Processes, Plasma Processes and Polymers Volume 5, Issue 6
(online 16 April 2008)

प्लाज़मा द्वारा रॉकेट प्रणोदन

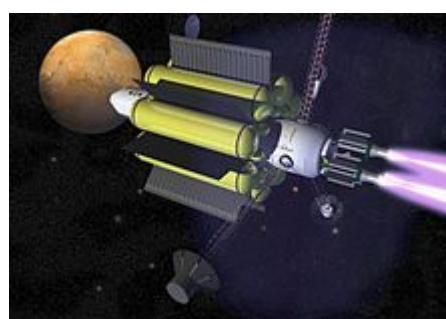


1961 में क्लीवलैंड, ओहियो में लुईस रिसर्च सेंटर में एक प्रारंभिक प्लाज़मा प्रणोदन इंजन

आज के रॉकेटों की सीमाएँ

हममें से बहुतों ने बचपन में भविष्य में चाँद, मंगल व तारों पर अंतरिक्ष यात्रा पर जाने का सपना देखा होगा। अंतरिक्षयान पहले से ही अधिकतर ग्रहों और सौर मंडल से भी आगे की यात्रा कर चुका है। हाल ही में भारत का मंगल मिशन भी मंगल ग्रह तक पहुँच गया है। हमने अंतरिक्ष यान का विकास देखा है जो मनुष्य को पृथ्वी से दूर ले जा सकता है। पृथ्वी के चारों ओर की अंतरिक्ष यात्रा लागभग रोजमर्रा की बात हो गई है और लगभग आधी सदी पहले चंद्रमा पर उतरने के बाद, मानव अब मंगल ग्रह की यात्रा करने की तैयारी कर रहा है।

हमारे पास अब तक ऐसे तेज़ यान नहीं हैं जो दूर अंतरिक्ष में गोता लगा सकें। हमारी वर्तमान प्रौद्योगिकी द्वारा निर्मित हल्के और छोटे अंतरिक्षयान से हमारे सबसे नज़दीकी ग्रह मंगल पर जाने के लिए अभी काफी लंबा समय लग जाएगा। वहाँ जाने वाले यात्रियों को कौन सी कठिनाइयों का सामना करना पड़ेगा? लाल ग्रह पर पहुँचने के लिए छह महीने से अधिक समय लगने के साथ-साथ उन्हें भारहीनता तथा दुर्बल करने वाली लगातार विकिरण को झेलना होगा। यात्रा के दौरान उन्हें शारिरीक और मानसिक पीड़ा भी सहनी पड़ेगी।



प्लाज़मा रॉकेट द्वारा चालित तथा नाभिकीय रिएक्टरों द्वारा शक्तियुक्त भविष्य का संभावित मंगल मिशन

इनमें से कई कठिनाइयाँ आज के रसायनिक रॉकेटों की सीमाओं के परिणामस्वरूप हैं। इतने दशकों की उत्कृष्ट तकनीकी प्रगति के बावजूद, इन रॉकेटों की ईंधन खपत इतनी अधिक है कि यान का केवल छोटा सा अंश ही अंतिम मंजिल तक पहुँच पाता है। उदाहरण के लिए यदि हमें ऊपर कुछ सौ किलोमीटर की दूरी पर अंतरिक्ष यान को कक्षा तक पहुँचाना है तो विशाल बाह्य ईंधन टैंक की आवश्यकता होगी। चंद्रमा की यात्रा के लिए तो काफी अधिक मात्रा में ईंधन की आवश्यकता होगी और मानव सहित मंगल ग्रह की यात्रा के लिए तो इससे भी अधिक।

प्लाज्मा रॉकेट - एक बेहतर विकल्प

इसका विकल्प क्या हो सकता है? इस संदर्भ में प्लाज्मा रॉकेट ने तेज़ अंतरिक्ष परिवहन के लिए नई व रोमांचक संभावनाओं को सामने रखा है। ऐसे रॉकेट इंजनों को विकसित करना जिसमें विद्युत और चुंबकीय क्षेत्रों द्वारा आयनित कण त्वरित होकर रॉकेट प्रणोदन की रेंज को विस्तार देंगे, जोकि रासायनिक रॉकेट की सीमाओं से काफी अधिक होगी। इसके अलावा ईंधन की खपत भी काफी कम होगी। वास्तव में, वर्षों से कई प्लाज्मा रॉकेटों को विकसित किया जा रहा है और कुछ तो सीमित क्रियान्वयन के लिए तैयार हैं।

हालांकि हमें इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि प्लाज्मा रॉकेट विद्युत की उपलब्धता पर निर्भर करते हैं जो अंतरिक्ष में अभी भी सीमित है। यह इसलिए क्योंकि अंतरिक्ष में मुख्य रूप से सौलर ऐरे (पंक्तियाँ) के माध्यम से ही बिजली उत्पन्न की जाती है। इस कारण से प्लाज्मा रॉकेट केवल निम्न-ऊर्जा के उपकरणों के रूप में सामने आया है जो लंबी दूरी की परिवहन और मानव अंतरिक्ष उड़ान के लिए उपयुक्त नहीं है। हालांकि इस स्थिति में तेज़ी से बदलाव आ रहा है। सौर प्रौद्योगिकी में हुई प्रगति से उपलब्ध विद्युत शक्ति में वृद्धि हुई है और इस सफलता ने उच्च शक्ति प्लाज्मा प्रणोदन के लिए नई व रोमांचक संभावनाओं के द्वारा खोल दिए हैं। इसके अतिरिक्त सूर्य से दूर के अंतरिक्ष मिशनों के लिए नाभिकीय ऊर्जा में फिर से दिलचस्पी होने से उच्च-शक्ति प्लाज्मा रॉकेटों के लिए नई संभावना सामने आयी है। चित्र 1 में दर्शाया गया है कि भविष्य का संभावित मंगल मिशन, जो प्लाज्मा रॉकेट द्वारा चालित व नाभिकीय रिएक्टरों द्वारा शक्तियुक्त होगा।

रॉकेट कैसे आगे बढ़ता है?

एक रॉकेट कैसे आगे बढ़ता है? जैसे कि हम जानते हैं कि रॉकेट के आगे बढ़ने का मौलिक सिद्धांत, न्यूटन की गति के तीसरे नियम, या क्रिया एवं विपरित प्रतिक्रिया के नियम पर आधारित है। एक रॉकेट उच्च वेग पर अपनी गति से विपरित दिशा में गैस को पीछे की ओर फेंकता है। आम तौर पर एक रासायनिक प्रतिक्रिया से उत्पन्न गर्मी दहन चैम्बर में दबाव बनाती है और एक सही तरीके से तैयार किए गए नोज़ल की क्रिया से निकास गति में परिवर्तित हो जाती है। अब हम ऐसा ही जोर निम्न वेग पर अधिक सामग्री को निकासित कर या अधिक वेग पर कम

सामग्री द्वारा प्राप्त कर सकते हैं। लेकिन हमें इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि सामग्री को बोर्ड पर ही ले जाने वाली है। इस कारण दूसरा दृष्टिकोण पसंद किया जाता है, अर्थात् उच्च वेग में कम सामग्री बाहर निकालना। ले जाने वाली सामग्री की मात्रा को कम करने के लिए एक उच्चतम संभव निकास वेग को प्राप्त करना जरूरी है। रासायनिक रॉकेट की पहुँच से परे निकास वेग को प्लाज़मा के उपयोग से प्राप्त किया जा सकता है जिसमें निकास गैसों के परमाणुओं के कुछ इलेक्ट्रॉनों को निकाल दिया गया है और जो आवेशित कणों से बने एक झोल जैसे दिखते हैं।

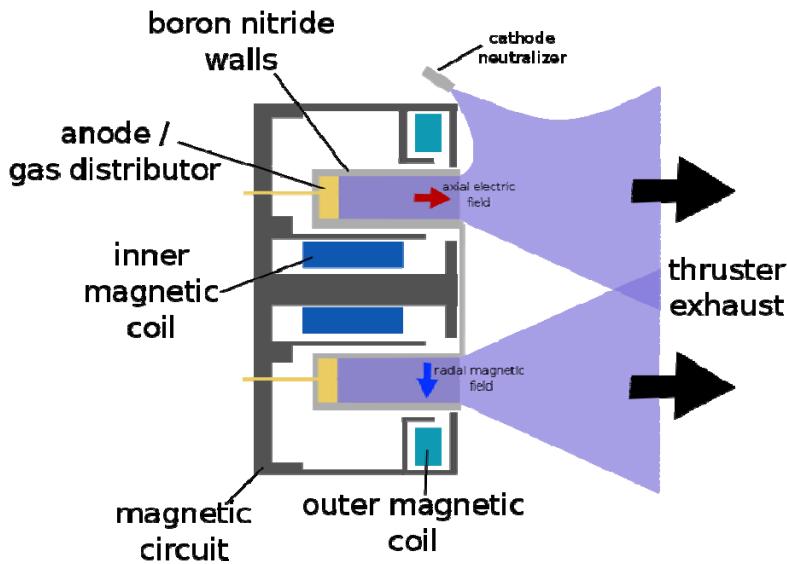
प्लाज़मा रॉकेट

फ्लॉरेसेंट ट्र्यूब में प्लाज़मा का तापमान लगभग $12,000^{\circ}\text{C}$ होता है। लेकिन वर्तमान में प्रयोगशाला में प्लाज़मा को इससे हजार गुना अधिक गर्म किया जा सकता है। इन गरम प्लाज़मा के कणों की गति प्रति सेकंड 300 किलोमीटर से अधिक होती हैं। यह तापमान सूर्य के भीतरी भाग में भी होता है। इतने तापमान पर प्लाज़मा के सीधे संपर्क में आने पर कोई भी पदार्थ टिक नहीं सकता। हालांकि प्लाज़मा, विद्युत एवं चुंबकीय क्षेत्र के साथ सही प्रतिक्रिया देता है। एसा चुम्बकीय चैनल बनाया जा सकता है जिसमें प्लाज़मा उच्च तापमान पर गरम हो सके। लेकिन सामग्री की दीवारों को छू न सकें।

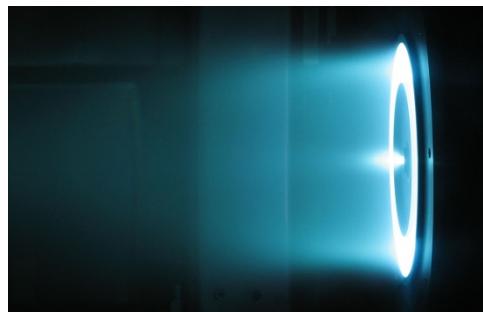
मंगल ग्रह से आगे यात्रा करने के लिए हम ऊर्जा की आवश्यकताओं को कैसे पूरा कर सकते हैं? जैसे ही अधिक वेग से गैस प्रक्षेपित होती है, ऊर्जा की आवश्यकता भी तेज़ी से बढ़ती जाती है। पृथ्वी-चाँद के वायुमण्डल में रॉबोटिक कार्गो मिशन के लिए सौर ऊर्जा से काम चला सकते हैं, लेकिन मानव सहित यात्रा के लिए नाभिकीय ऊर्जा के अलावा अन्य कोई विकल्प फिलहाल संभव नहीं है। वास्तव में मंगल ग्रह से आगे की यात्रा के लिए नाभिकीय ऊर्जा विशेष रूप से सही है क्योंकि इतनी दूरी पर सौर ऊर्जा बहुत कम होती है।

प्लाज़मा रॉकेट इंजन

कम ऊर्जा वाले कई प्लाज़मा रॉकेटों का उपयोग पहले से ही किया जा रहा है। एक प्रारंभिक प्लाज़मा प्रोपल्शन इंजन को चित्र 2 में दर्शाया गया है। आयन इंजन सबसे अच्छी जानी-मानी और पुरानी प्रौद्योगिकी है, जो काफी कम तापमान और कम घनत्व निवर्णन से आयनों को निष्कर्षित और त्वरित करने के लिए एक धातु ग्रीड का उपयोग करती है। आयन जेट को रॉकेट निकास पर एक निष्क्रिय गन से निकले इलेक्ट्रॉनों के छिड़काव से निष्प्रभावी करना पड़ता है; ऐसा नहीं करने पर अंतरिक्ष यान एक ऋणात्मक विद्युत चार्ज उत्पन्न करेगा जिससे अंततः वो आयनों को वापस अंदर खींच लेगा। जेनन प्रॉपेलेट की सहायता से आयन इंजन 70 किलोमीटर प्रति सेकंड से अधिक निष्कासी वेग उत्पन्न कर सकता है।



हॉल थ्रस्टर का बड़ा हिस्सा अक्षीय रूप से सममित हैं। यहाँ अक्ष के साथ अनुप्रस्थ काट को दर्शाया गया है।



NASA जेट प्रोपल्शन प्रयोगशाला में 6 kW हॉल थ्रस्टर का प्रचालन

आयन इंजन का अन्य स्वरूप हॉल इफेक्ट थ्रस्टर से चलने वाला इंजन है जो स्थिर चुंबकीय क्षेत्र को विद्युत क्षेत्र से लंबरूप में जोड़ता है। यह विद्युत क्षेत्र ऊपर स्थित एनोड एवं नीचे की ओर स्थित आभसी कैथोड (जिसे न्यूट्रलाइज़र कहा जाता है) से उत्पन्न होता है। इस कैथोड के आसपास इलेक्ट्रॉन का घनत्व अधिक होता है और रॉकेट में जहाँ से गैस बहार निकलती है वहाँ स्थित होता है(चित्र 3)। यह आभसी कैथोड एनोड के नज़दीक थ्रस्टर में उत्पन्न आयनों को आकर्षित करता है। और अंततः त्वरित आयन बीम को न्यूट्रलाइज़र द्वारा उत्सर्जित कुछ आयनों द्वारा निष्प्रभावी किया जाता है। इस तकनीक से प्लाज्मा बमबारी में सीधे संपर्क में आ रहे रॉकेट घटकों का धिसाव और उच्च तापन से हो रहे नुकसान को कम किया जा सकता है, जो प्लाज्मा रॉकेट इंजीनियरिंग में एक प्रमुख समस्या है। भौतिक बाधाओं के कारण आयन एवं हॉल थ्रस्टरों में प्लाज्मा घनत्व आम तौर पर कम है। इस कारण उनका शक्ति घनत्व भी कम है। इससे तात्पर्य यह है कि इस प्रकार की उच्च-ऊर्जा प्रणालियों को आकार में बड़ा बनाने की आवश्यकता है। कम-शक्ति वाले हॉल इफेक्ट थ्रस्टर का उपयोग वर्तमान में अंतरिक्ष में व्यवसायिक उपग्रहों की स्थिति को बनाए रखने के लिए इस्तेमाल किया जा रहा है।

प्राथमिक नोदन के लिए वैकल्पिक उच्च-शक्ति रेडियो-आवृत्ति चालित प्रणालियों पर काफी शोध किया जा रहा है। ऐसी ही एक अवधारणा है VASIMR। इस इंजन को कई वैकल्पिक गैसों के साथ प्रचालित किया जा सकता है और ये केवल ज़ेनन जैसे दुर्लभ व महंगे प्रणोदकों पर निर्भर नहीं हैं। इस इंजन में चुंबकीय क्षेत्रों द्वारा आयनों को निर्देशित व नोजल के बाहर त्वरित किया जाता है। VASIMR रेडियो तरंगों से एक प्रणोदक को आयनित करके प्लाज़मा में रूपांतरित करता है और फिर एक चुंबकीय क्षेत्र से प्लाज़मा को त्वरित कर रॉकेट इंजन को पीछे की ओर प्रक्षेपित करता है। हालांकि कई अन्य प्लाज़मा थ्रस्टरों को वर्तमान में विकसित किया जा रहा है। सभी के फायदे भी हैं और नुकसान भी। वर्तमान में इसके परीक्षण और नियोजन पर गहन अनुसंधान चल रहा है।

अन्य दूसरी प्रणाली मेगेनेटो प्लाज़मा डायनामिक थ्रस्टर (एमपीडी) है, जो लॉरेंट्ज बल क्षरा थ्रस्ट पैदा करता है। यह बल चुंबकीय क्षेत्र एवं विद्युत धारा की परस्पर अंतःक्रिया के कारण पैदा होता है।

प्लाज़मा रॉकेट इंजन: सुनहरे भविष्य का संकेत

प्लाज़मा इंजन ग्रहों के बीच की लंबी दूरी की अंतरिक्ष यात्रा की संभावना को पूरा करने का वादा करता है। इसके अलावा प्लाज़मा रॉकेट कई रूपों में उपयोगी साबित हो सकते हैं। उदाहरण के लिए कम ऊर्जा वाले रॉकेट अंतरिक्ष स्टेशनों के कक्षों की देख-रेख में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं। प्लाज़मा इंजन अपनी पर्याप्त ऊर्जा के साथ पृथ्वी से टकराने वाले ऐस्ट्रोरॉड को रास्ते से हटाने के लिए भी उपयोगी साबित हो सकता है। सुदूर भविष्य में संलयन-संचालित प्लाज़मा रॉकेट हमें पृथ्वी से दूर ले जा सकेगा। यह मानवजाति के अस्तित्व को सुनिश्चित करने में भी मदद कर सकता है।

संदर्भ

1. <http://www.plasmacoalition.org>: Plasma Propulsion for Space Flight
2. by Franklin Chang Diaz
3. F R Chang Diaz Plasma Propulsion for Interplanetary Flight,
4. Thin Solid Films Vol 506-507 (May 26, 2006) 449-453
5. Eric J Lerner, Plasma Propulsion in Space, The Industrial Physicist (October 2000): 16-19
6. en.wikipedia.org/wiki/Plasma_propulsion_engine

प्लाज़मा से पर्यावरण की स्वच्छता

स्वच्छ पर्यावरण - एक बड़ी चुनौती

आजकल प्राकृतिक संसाधनों की रक्षा एक बड़ी चुनौती बन गई है। औद्योगिक अपशिष्ट और प्रदूषण के प्रभाव से आवश्यक संसाधन जो जीवन का आधार है, जैसे जल, वायु व भूमि को काफी नुकसान उठाना पड़ा है। इसके परीणाम-स्वरूप पर्यावरण की गुणवत्ता हमेशा से एक ज्वलंत मुद्दा बनी हुई है। कारखानों और वाहनों से ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन के प्रभाव को कम करने के लिए और ग्लोबल वार्मिंग की समस्या के कारण विश्व भर के वैज्ञानिक पर्यावरण की गुणवत्ता में सुधार लाने के नए तरीकों को विकसित कर रहे हैं। इनमें से एक उपाय प्लाज़मा का उपयोग भी है।

अब प्लाज़मा के बारे में कुछ शब्द! जहां पर ठोस, तरल और गैस में कोई विद्युत चार्ज नहीं होता, वहीं प्लाज़मा में मुक्त धूम रहे आयन (धनावेशित अणुओं या परमाणु) और इलेक्ट्रॉन में ऋणावेशित कण होते हैं। प्लाज़मा, प्रदूषकों को पर्यावरण के अनुकूल सुरक्षित पदार्थों में परिवर्तित कर सकता है। यह रूपांतरण ऊष्मा से या सामान्य गैस में अनुपस्थित कणों की अंतःक्रिया से प्राप्त किया जा सकता है।

प्लाज़मा द्वारा प्रदूषकों का प्रसंस्करण

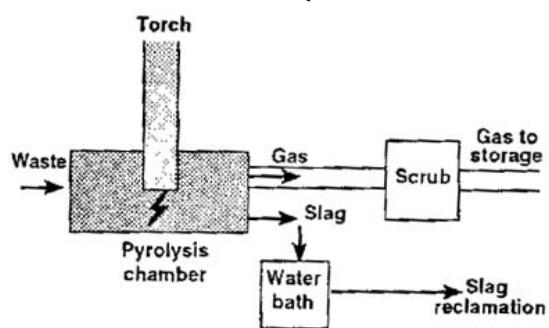
प्लाज़मा के उपयोग से प्रदूषकों का कुशलतापूर्वक प्रसंस्करण कैसे किया जा सकता है? इन प्रक्रियाओं में प्लाज़मा ज्यादातर वायुमंडलीय दाब पर कार्य करता है। यह ध्यान देने योग्य है कि प्लाज़मा के लिए यह अपेक्षाकृत उच्च दाब है! इससे तात्पर्य यह है कि अधिकतर प्लाज़मा के विविध उपयोगों में जैसे संलयन ऊर्जा और कंप्यूटर चिप के उत्पादन में दाब की आवश्यकता बहुत कम होती है - लगभग निर्वात स्थिति के निकट! वायुमंडलीय दाब पर प्राकृतिक रूप से बिजली के चमकने से प्लाज़मा प्रक्रिया की कल्पना करने से यह अंदाज़ा हो जाएगा कि वायुमंडलीय दाब पर मानव-निर्मित प्लाज़मा को नियंत्रित व उपयोग करना कितना मुश्किल होगा! लेकिन हमें स्वच्छ पर्यावरण के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए इस समस्या का समाधान ढूँढ़ना ही होगा। “थर्मल मोड”(ऊष्मीय स्थिति) प्रक्रिया द्वारा प्लाज़मा के कण (इलेक्ट्रॉन, आयन व अनावेशित अणु) समान रूप से गरम होते हैं। प्लाज़मा में आवेशित व अनावेशित कणों का तापमान भस्मीकरण (किसी भी चीज़ को पारंपरिक साधन से जलाने) की प्रक्रिया के तापमान से अधिक होता है। इसलिए प्लाज़मा के कण कचरे को ज्यादा अच्छे तरीके से नष्ट कर सकते हैं।

भस्मीकरण प्रक्रिया से कचरे को जलाने के लिए अधिक मात्रा में वायु की आवश्यकता होती है। वहीं दूसरी ओर एक उच्च तापमान के तापीय प्लाज़मा में काफी कम मात्रा में गैस प्रवाह चाहिए क्योंकि उच्च तापमान को प्राप्त करने के लिए किसी भी प्रकार की हवा या ऑक्सीजन की

आवश्यकता नहीं होती। इसलिए नगरपालिका या अस्पताल के खतरनाक जैविक कचरों को पूर्ण रूप से जलाने के लिए पारंपरिक भट्टीयों के बजाय प्लाज़मा भट्टी का उपयोग किया जा सकता है। इस प्रक्रिया में जलने के समय निकलने वाली गैस बहुत कम होती है। इसका एक फायदा और है। प्लाज़मा के उपयोग से महंगे गैस फिल्टरों (आमतौर पर जिसे 'स्क्रबर' कहा जाता है) जिसे वातावरण में प्रदूषण की मात्रा को कम करने के लिए निर्मित किया गया है, उसकी आवश्यकता कम पड़ती है। सबसे बड़ी विशेषता यह है कि प्लाज़मा प्रक्रिया में राख उत्पन्न नहीं होती, जो नगरपालिका या अस्पताल के कचरे से पैदा होती है और इसे हानिकारक माना गया है। आर्क फर्नेस में उच्च-तापीय प्लाज़मा, राख का उत्पादन करने के बदले अनावश्यक सामग्रियों को एक काँच जैसे पदार्थ में परिवर्तित करता है साथ ही साथ पिघले धातु को अलग करता है जिसका बाद में पुनःचक्रण किया जा सकता है। इस स्थायी शीशे जैसी सामग्री को जमीन के खड़डे भरने में इस्तेमाल किया जा सकता है क्योंकि यह मिट्टी में रिस नहीं सकता और पर्यावरण को कोई नुकसान नहीं पहुँचा सकता।

प्लाज़मा पाइरोलिसिस

"प्लाज़मा पाइरोलिसिस" तकनीक (चित्र1) द्वारा प्लाज़मा भट्टी का उपयोग भारत सहित कई देशों में अलग-अलग प्रकार के कचरे जैसे - अस्पताल के कचरे, जैविक कचरे, रबर पदार्थों और प्लास्टिक व अन्य पेट्रोलियम उत्पादों के कचरों का निपटान करने के लिए किया जाता है। प्लाज़मा पाइरोलिसिस प्रक्रिया में उत्पन्न हुई गरमी में इस्तेमाल की गई सामग्री रसायनिक गुणधर्म पर आधारित नहीं है। यह एक तेजी से गर्म होने वाली प्रक्रिया है जिसमें 5000°C तापमान मिलिसेकंडों में प्राप्त किया जा सकता है। इससे कचरे का शमन जल्दी होता है और यह बहुत ही कम मात्रा में गैस का इस्तेमाल करता है। अस्पताल के कचरे का निपटान करनेवाले पाइरोलिसिस संयंत्र में उच्च पराबैंगनी विकिरण प्रवाह रोगाणुओं को नष्ट कर देता है। उपचारित किया जाने वाला कचरा सूखा या गीला हो सकता है। कार्बन मोनोऑक्साइड और हाइड्रोजन के रूप में ऊर्जा को प्राप्त कर सकते हैं। प्लाज़मा अनुसंधान संस्थान, गांधीनगर, गुजरात के एफसीआईपीटी केंद्र ने प्लाज़मा प्रौद्योगिकी के उपयोग से विभिन्न प्रकार के कचरों के निपटान के लिए प्लाज़मा पाइरोलिसिस को विकसित किया है।



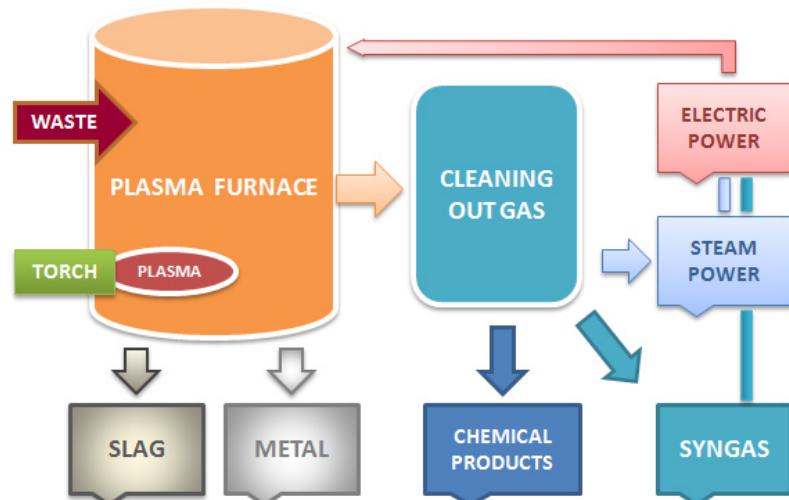
प्लाज़मा गैसीकरण

प्लाज़मा पाइरोलिसिस (योजनाबद्ध)

(Source: cO3.apogee.net)

प्लाज्मा गैसीकरण

गैसीकरण की प्रक्रिया में पदार्थों पर थोड़ा ऑक्सीजन छोड़ा जाता है, लेकिन इतनी कम मात्रा में की वह जले नहीं। गैसीकरण प्रक्रिया में तापमान आमतौर पर 750°C से ऊपर होता है। कुछ प्रणालियों में पाइरोलिसिस चरण के बाद एक दूसरा गैसीकरण चरण आता है। इससे अधिक ऊर्जा वहन करने वाली गैस कचरे से अलग हो जाती हैं। गैसीकरण और पाइरोलिसिस का मुख्य उत्पाद सिनगैस (सिंथेटिक गैस) है, जो मुख्य रूप से कार्बन मोनोऑक्साइड और हाइड्रोजन (85 प्रतिशत) और साथ में थोड़ी मात्रा में कार्बन डाइऑक्साइड, नाइट्रोजन, मीथेन और विभिन्न अन्य हाइड्रोकार्बन गैसों से बना है। सिनगैस (सिंथेटिक गैस - हाइड्रोजन व कार्बन मोनोऑक्साइड का मिश्रण) को पेट्रोकेमिकल और रिफाइनिंग उद्योगों में एक मूल रासायनिक कच्चे माल के रूप में भाप या विद्युत उत्पादन करने के लिए ईंधन के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है। इस सिनगैस का ऊष्मीय मूल्य गैसीकरण के लिए उपयोग किये जा रहे कचरे के प्रकार पर आधारित होगा।



प्लाज्मा गैसीफायर

(Source:www.httcanada.com)

प्लाज्मा से पर्यावरण की देखरेख

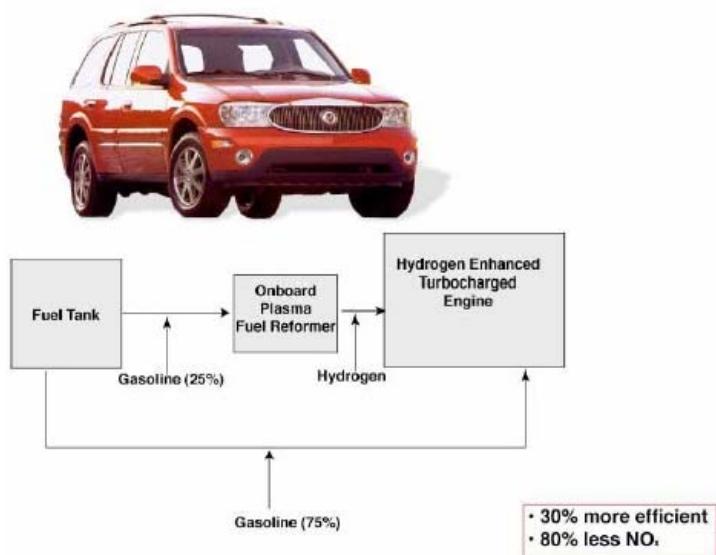
प्लाज्मा (तापीय व गैर-तापीय दोनों) का उपयोग करके हवा और धूएं के कारण हो रहे पर्यावरण प्रदूषण पर निगरानी रखी जा सकती है (चित्र 3)। प्लाज्मा धूएं के द्वेर में उत्पन्न धूएं के लेश तत्वों को प्रकाश का उत्सर्जन कराने के लिए उत्तेजित करता है। स्पेक्ट्रोमीटर का उपयोग करके प्रदूषकों के तत्वों की पहचान की जा सकती है और प्रदूषण की मात्रा का पता लगा सकते हैं। ऐसे प्रदूषण मॉनिटरों से एक अरब के एक भाग जितनी संवेदनशीलता से लेड, क्रोमियम, बेरिलियम, मर्क्युरी एवं अन्य प्रदूषकों की पहचान की जा सकती है। इस प्रकार वायु प्रदूषण पर बेहतर तरीके से नियंत्रण रखा जा सकता है।



धूएं के द्वारा के उत्सर्जन को स्वच्छ और नियंत्रित करने के लिए प्लाज़मा का उपयोग किया जा सकता है।

वाहनों से होनेवाले प्रदूषण पर नियंत्रण

प्लाज़मा के उपयोग से पारंपरिक जीवाश्म ईंधन को उसके जलने से पहले उसे सुधार कर घटकों में विभाजित कर पर्यावरण के प्रदूषण को कम किया जा सकता है जिससे वह अच्छी तरह से जल संकें और प्रदूषण कम हो (चित्र 4)। एक लघु आकार के उच्च वोल्टेज तापीय प्लाज़मा संयंत्र - “प्लाज़माट्रॉन” पर कार्य चल रहा है जो जटिल कार्बनिक अणुओं में से हाइड्रोजन अणुओं को अलग करने में सहायक है। इस संयंत्र की मदद से पेट्रोल जैसे हाइड्रोकार्बन ईंधनों को हाइड्रोजन या सिन्गैस जैसे स्वच्छ ईंधन में तबदिल कर उपयोग किया जा सकता है।



प्लाज़मा-हाइड्रोजन वृद्धि के इस्तेमाल से उच्च क्षमता वाले भावी ऑटोमोबाइल इंजन
(स्रोत: www.windsofchange.com)

भूमि प्रदूषण पर नियंत्रण

प्लाज़मा के उपयोग से भूमि के प्रदूषण को भी नियंत्रित किया जा सकता है। उच्च तापमान पर प्लाज़मा ठोस कचरों और जमीन में हो रहे रासायनिक रिसाव से विषैले यौगिकों को नष्ट करने या उन्हें सुरक्षित रूप में परिवर्तित करने में प्रयोग किया जा सकता है। इस दिशा में विश्वभर में कई जगहों पर अनुसंधान कार्य चल रहा है।

जल प्रदूषण पर नियंत्रण

कम दाब वाला प्लाज़मा, बड़ी मात्रा में पराबैंगनी विकिरण (UV), एक्स-विकिरण या इलेक्ट्रॉन बीम को वातावरण में उत्सर्जित करता है। इस प्लाज़मा का उपयोग आवश्यकतानुसार पर्यावरण की रक्षा के लिए किया जा सकता है। उदाहरण के लिए तीव्र पराबैंगनी विकिरण पानी के एक सूक्ष्मजीव के डीएनए को निष्क्रिय कर उस जीवाणु की बढ़ती संख्या को रोक सकता है। इस प्लाज़मा आधारित UV पद्धति की प्रक्रिया में कुछ ही सेकंड लगते हैं और इससे पानी के स्वाद और महक पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता और यह पद्धति जलजनित बैकटेरिया और वायरस को प्रभावित कर नियंत्रित करती है। इस तकनीक को बांग्लादेश में इस्तेमाल किया जा रहा है, जहां पर इसे प्रमाणित किया गया कि सतही जल (तालाबों और हस्तचालित-पंप वाले कुओं) में फैलने वाले रोगों जैसे कॉलेरा सूक्ष्मजीवों को पराबैंगनी विकिरण से नष्ट करके पानी को पीने में इस्तेमाल किया जा सकता है। तीव्र पराबैंगनी जल शोधन प्रणालियाँ विकासशील देशों के लिए विशेष रूप से महत्वपूर्ण हैं क्योंकि इन्हें आसानी से इस्तेमाल किया जा सकता है। और इसके रखरखाव में कम खर्चा होता है साथ ही कम कीमत में उच्च उत्पादन देती है। प्लाज़मा आधारित पराबैंगनी जल उपचार प्रणालियाँ उबाले गए पानी से कई हज़ार गुना कम ऊर्जा का उपयोग करती हैं!

जीवन की गुणवत्ता को सुधारने हेतु

इस तथ्य में कोई दो राय नहीं है कि प्लाज़मा प्रौद्योगिकियों के विकास और उसके उपयोग से हमारे पर्यावरण को स्वच्छ और सुरक्षित रखा जा सकता है। इन प्रौद्योगिकियों से सफाई के नए तरीके मिलते हैं और प्रदूषण को कम किया जा सकता है और विकासशील देशों के जीवन की गुणवत्ता में भी सुधार लाया जा सकता है। ये हमारे पर्यावरण की कई चुनौतियों का समाधान उपलब्ध करा सकती हैं। ये प्रौद्योगिकियाँ विकसित होने पर हवा, पानी और भूमि, जो आज एक वैश्विक कचरे का डब्बा बन चुका है, उसे बिते हुए कल का दुःस्वप्न बना सकती हैं।

संदर्भ

1. <http://www.plasmacoalition.org>: a highly resourceful website on plasmas and their applications.
2. Cleaning the Environment by Paul Woskov in plasmacoalition.org
3. Pyrolysis, Gasification and Plasma, Friends of the earth, September 2009, www.foe.co.uk
4. Gas Plasma Autos on the way? by Donald Sensing, www.Windsofchange.net
5. Plasma Processing Update, FCIPT (IPR), Newsletter Vols 65 (2012) & 66 (2012), www.plasmaindia.com

नाभिकीय संलयन से ऊर्जा

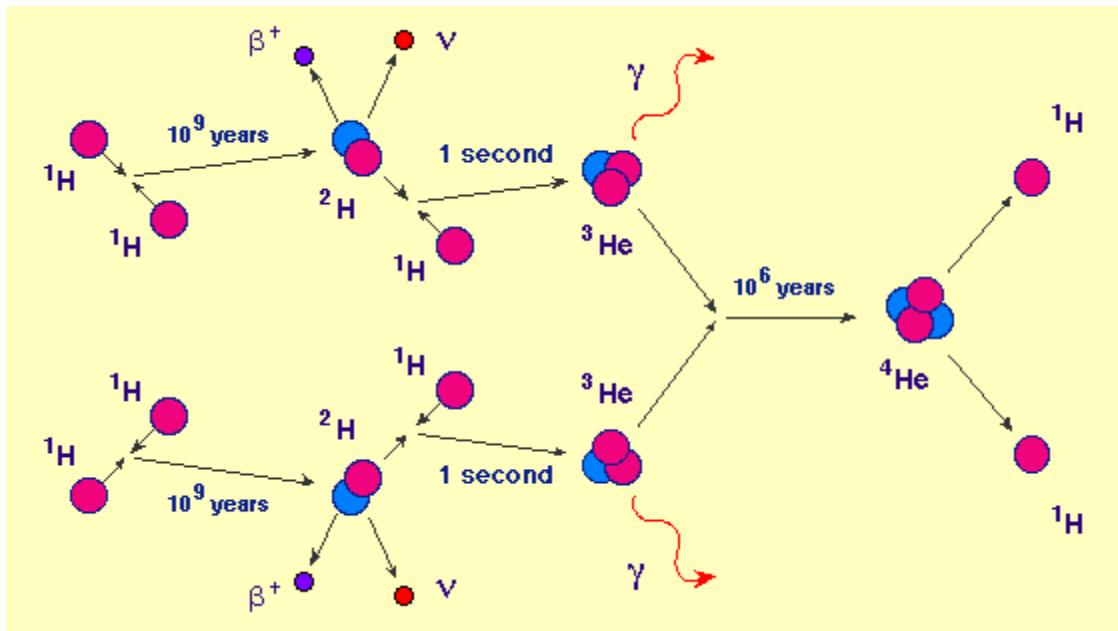
विखण्डन और संलयन

जब एक भारी नाभिक जैसे युरेनियम-235 (U^{235}) पर न्यट्रॉन से प्रहार किया जाता है, तब युरेनियम इस न्युट्रॉन को अवशोषित कर दो, लगभग समान अवयवों में विभाजित हो जाता है और ऊर्जा का उत्सर्जन होता है। इस प्रक्रिया को नाभिकीय विखण्डन कहते हैं। इसके विपरीत ऊर्जा का उत्सर्जन तब भी होता है जब दो हल्के नाभिक आपस में जुड़कर अपेक्षाकृत एक बड़े द्रव्यमान संख्या वाले नाभिक का निर्माण करते हैं। इस प्रकार निर्मित बड़े नाभिक का द्रव्यमान प्रतिक्रिया के पूर्व दोनों ही नाभिकों के द्रव्यमानों के योग से कम होता है। द्रव्यमान का यह अंतर, आइन्सटाइन के द्रव्यमान ऊर्जा संबंध के अनुसार, ऊर्जा की उत्पत्ति के रूप में प्रकट होता है। इस प्रक्रिया को नाभिकीय संलयन कहते हैं। परंतु यह प्रक्रिया दो परस्पर धनावेशित कणों के बीच होने वाले कुलम्ब विकर्षण बल, जो इन दो कणों को एक दूसरे के नाभिकीय बल क्षेत्र में आने का एवं उनके संलयन का विरोध करती है। ऐसा जात है कि दो ड्यूट्रोन(2H) कणों के लिए, इस प्रतिकर्षण बल का भेदन करने के लिए आवश्यक ऊर्जा लगभग 200 KeV है। इस नाभिकीय संलयन के लिए आवश्यक उच्च ऊर्जा को किस प्रकार प्राप्त किया जाए? सामान्य तापमान पर औसत ऊष्मीय ऊर्जा मात्र 0.04 eV होती है। भारी मात्रा में संलयन प्रक्रिया को संपन्न करने का उपयुक्त तरीका यह होगा की पदार्थ के तापमान को बढ़ाया जाए ताकि अणुओं को पर्याप्त ऊर्जा प्राप्त हो सके और वे कुलम्ब - प्रतिकर्षण को अपनी ऊष्मा-गति से बेध सकें। इस प्रक्रिया को ऊष्मा नाभिकीय संलयन कहते हैं।

सामान्य तापमान पर, किसी कण की औसत ऊष्मीय ऊर्जा बहुत कम होने पर नाभिकीय प्रक्रिया के होने की अपेक्षा नहीं की जा सकती। भाग लेने की संभावना ना के बराबर होती है। यहाँ तक कि सूर्य के केन्द्र भाग में भी, जहाँ तापमान 1.5×10^7 तक होता है, वहाँ भी औसत ऊष्मीय ऊर्जा का मान मात्र 1.9 KeV ही होता है, जो 200 KeV के प्रतिबंध से बहुत ही कम है। जबकि हम भली-भांति जानते हैं कि सौर मंडल में ताप नाभिकीय संलयन सौर मंडल न सिर्फ निरंतर होता रहता है, बल्कि यह वहाँ पर एक प्रमुख एवं प्रधान विशिष्टता है। तो प्रश्न यह उठता है कि सूर्य के अंतः भाग में नाभिकीय संलयन की प्रक्रिया किस प्रकार संचालित होती है? हालांकि 19 KeV सिर्फ औसत ऊष्मीय गतिज ऊर्जा है, फिर भी इस औसत मान से उच्च ऊष्मीय ऊर्जा वाले भी कई ऊर्जावान कण भी विद्यमान हैं जो अल्प संख्या में हैं। इसके आगे यह भी संभव है जिन कणों की गतिज ऊर्जा प्रतिबंधित ऊर्जा से कम है वो इस प्रतिरोध सीमा में टेनेलिंग प्रक्रिया द्वारा प्रवेश कर सकें जो एक पूर्णतः क्वांटम मेकेनिकल प्रक्रिया है। यहीं वह प्रक्रिया है जिससे सूर्य के अंतः भाग में संलयन प्रक्रियाएँ संभव होती हैं।

नाभिकीय संलयन एवं तारों में ऊर्जा का उत्पादन

सूर्य $3.9 \times 10^{26} \text{ W}$ की दर से अपनी ऊर्जा उत्सर्जित करता है और ऐसा वह 4.5 अरब वर्षों से करता आ रहा है। यह तथ्य सन् 1930 से ही भली-भाँति जात है कि सूर्य के आंतरिक भाग में हो रही ऊष्मानाभिकीय संलयन प्रक्रिया ही इस प्रगाढ़ ऊर्जा का स्रोत है। सूर्य का द्रव्यमान $2 \times 10^{30} \text{ Kg}$ है। आखिर कौन सी संलयन प्रक्रिया सूर्य की इस ऊर्जा को जन्म देती है? सूर्य की यह ऊर्जा ताप नाभिकीय दहन जिससे हाइड्रोजन हीलियम में परिवर्तित होता है, के कारण उत्पन्न होती है। यह प्रक्रिया प्रोटॉन-प्रोटॉन (PP) चक्र के कारण संपन्न होती है जैसा कि चित्र (1) में दिखाया गया है।

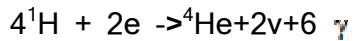


प्रोटॉन-प्रोटॉन (पीपी) चक्र जो मुख्य रूप से सूर्य में ऊर्जा उत्पादन के लिए होता है

आइए हम प्रोटॉन चक्र को संक्षेप में वर्णित करते हैं: दो प्रोटॉन एक साथ संलयन एवं β -क्षय प्रक्रिया से गुजरते हैं एवं एक पोजीट्रॉन एक न्यूट्रॉनों एवं एक ड्यूट्रॉन या एक भारी हाइड्रोजन नाभिक की उत्पत्ति करते हैं। पोजीट्रॉन आकस्मिक रूप से अति शीघ्र ही सूर्य के अंदर एक मुक्त इलेक्ट्रोन से मिलता है, एवं दोनों कण परस्पर लुप्त हो जाते हैं। इनकी स्थिर ऊर्जा दो गामा कणों के रूप में निकलती है। ड्यूट्रॉन जब दूसरे ${}^1\text{H}$ से प्रतिक्रिया करता है तब हीलियम के एक नाभिक की उत्पत्ति होती है जिसमें दो प्रोटॉन एवं एक न्यूट्रॉन ${}^3\text{He}_2$ एवं एक गामा किरण होते हैं। फिर दो अलग-अलग प्रक्रियाओं द्वारा उत्पन्न दो ${}^3\text{He}_2$ नाभिक आपस में विलय द्वारा एक ${}^4\text{He}_2$ एवं दो प्रोटॉनों की रचना करते हैं। पूरी प्रक्रिया का सारांश यह है कि हाइड्रोजन, हीलियम में परिवर्तित होता है एवं इससे उत्सर्जित ऊर्जा, प्रक्रिया में भाग लेने वाले कणों एवं उत्पन्न गामा किरणों को प्राप्त होती है। हम देख सकते हैं कि दो प्रोटॉनों से प्रारंभ कर प्रक्रिया के अंत में हमें दो प्रोटॉन एवं एक हीलीयम नाभिक (${}^2\text{He}_4$) प्राप्त होता है।

एक स्टेलर के भीतरी भाग में एक नाभिक के इस अनुक्रम के प्रत्येक पद से होकर गुजरने में लगे औसत समय को चित्र में दिखाया गया है। उदाहरण स्वरूप, एक हाइड्रोजन नाभिक एक दूसरे हाइड्रोजन नाभिक से प्रतिक्रिया एवं अनुक्रमों के प्रारंभ के पूर्व लगभग एक अरब वर्षों तक प्रक्रियाओं से गुजरता है। चूंकि इस प्रक्रिया के अन्य सोपान, इस समय से काफी कम समय वाला होता है, उपरोक्त प्रारंभिक कदम ही इस प्रक्रिया के दर को संचालित करता है। इस प्रकार की अविश्वसनीय रूप से मंद गति की प्रतिक्रिया दर ही आकाश में सामान्य तारों के चमकने का कारण है क्योंकि इन तारों (ग्रहों) के भीतर इतने सारे हाइड्रोजन कण हैं कि किसी भी एक समय पर कई हाइड्रोजन कण प्रोटॉन कड़ी वाली प्रक्रियाओं से गुजर रहे होते हैं।

प्रश्न उठता है की प्रोटॉन चक्र में कितनी मात्रा में ऊर्जा का उत्सर्जन होता है? एक प्रोटॉन चक्र के संपूर्ण अवलोकन से पता चलता है कि यह चार प्रोटॉनों एवं दो इलेक्ट्रॉनों के संयोग द्वारा उत्पन्न एक अल्फा कण (${}^4\text{He}_2$ नाभिक), दो न्यूट्रॉन एवं छ: गामा किरणों के द्वारा निर्धारित होता है:



अब हम प्रतिक्रिया समीकरण के दोनों ओर दो इलेक्ट्रॉनों को जोड़ते हैं, तब हमें यह प्राप्त होता है:



कोष्ठक के अंदर की ईकाईयाँ परमाणुओं को दर्शाती हैं ना कि हाइड्रोजन एवं हीलियम की मुक्त नाभिकों को। हाइड्रोजन एवं हीलियम के परमाणिक भारों का प्रयोग करते हुए हम, उत्पन्न ऊर्जा Q को आसानी से इस प्रकार परिकलित कर सकते हैं:

$$\begin{aligned} Q &= \Delta mc^2 = [4m({}^1\text{H}) - m({}^4\text{He})] c^2 \\ &= [4(1.007825 \text{ u}) - 4.002603 \text{ u}] c^2 \\ &= 26.7 \text{ MeV}. \end{aligned}$$

न्यूट्रॉनों का भार नगण्य होता है एवं गामा-किरण फोटॉन भारहीन होते हैं, अतः उपरोक्त परिकलन में उनका कोई उल्लेख नहीं है। प्रत्येक चक्र में उत्पन्न दो न्यूट्रॉन 0.5 MeV ऊर्जा वाले होते हैं एवं तीव्र होने के कारण ये सूर्य से पलायित हो जाते हैं। इस प्रकार सूर्य के अन्दर विद्यमान ऊर्जा प्रति चक्र 26.2 Mev है।

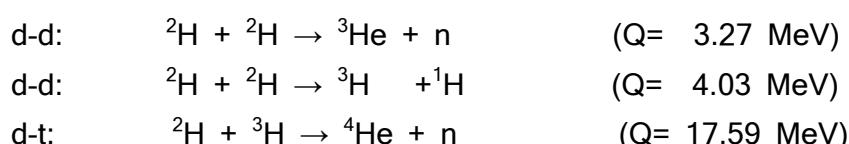
अब विचारणीय है की इस दर से कितने समय तक सूर्य अपनी ऊर्जा उत्सर्जित कर सकता है जब तक कि वहाँ उपस्थित संपूर्ण हाइड्रोजन, हीलियम में परिवर्तित हो चुका हो। हाइड्रोजन का दहन पिछले 4.5 अरब वर्षों से होता आ रहा है एवं अभी भी आगे 5 अरब वर्षों के लिए हाइड्रोजन शेष है। तब बड़े परिवर्तन होने शुरू होंगे। सूर्य का अंतः भाग जब मुख्यतः हीलियम में परिवर्तित हो चुका होगा, तब लुप्त होना एवं तप्त होना प्रारम्भ होगा जबकि बाहरी आवरण बड़े स्तर पर फैलने लगेगा, यहाँ तक कि वह पृथ्वी की कक्षा को निगल जाए। तब सूर्य वह रूप धारण कर लेगा जिसे खगोलशास्त्री रक्त दानव कहते हैं।

प्रोटॉन-प्रोटॉन प्रतिक्रिया हीलियम को जन्म देती है। परन्तु क्या हम भारी तत्वों के संश्लेषण पर विचार करें? जिस प्रकार तारों की संरचना एवं उत्पत्ति होती है तथा वे उत्तरोत्तर गर्म होते जाते हैं, अन्य तत्व किसी अन्य प्रक्रिया द्वारा उत्पन्न हो सकते हैं। फिर भी A=56 से ज्यादा मान वाले तत्व, जैसे आयरन (^{56}Fe) संलयन प्रक्रिया द्वारा नहीं बनाए जा सकते हैं। ऐसे तत्व सुपरनोवा विस्फोटन से निर्मित हो जाते हैं जब बड़े एवं विशाल तारे, जो सूर्य से भी 8-10 गुना ज्यादा बड़े हैं, उनका विस्फोट होता है। फिर सूर्य के अंदर आयरन से भी ज्यादा भारी द्रव्यमान वाले तत्व किस प्रकार पाए जाते हैं? सूर्य (अन्य ग्रहों सहित) सुपरनोवा विस्फोटन के मलबे से निर्मित हुआ था जिनमें ऐसे तत्व मौजूद थे और इसीलिए हम सूर्य एवं पृथ्वी पर इन तत्वों की उपस्थिति देख पाते हैं।

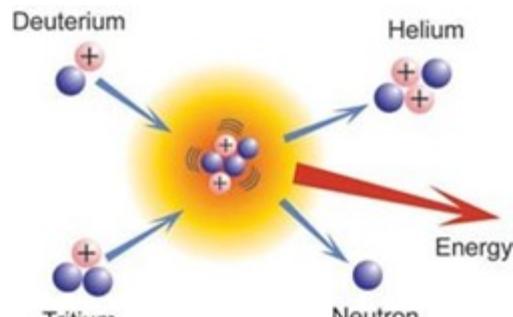
नियंत्रित ताप नाभिकीय संलयन

हमारे पास पहले से ही ऐसे रिएक्टर मौजूद हैं जो नाभिकीय विखण्डन द्वारा ऊर्जा की उत्पत्ति करते हैं। पर क्या हम ऐसे रिएक्टर बना पाए जो नियंत्रित ताप नाभिकीय संलयन द्वारा ऊर्जा का निर्माण कर सके? हमारे पास समुद्र एवं महसागरों के जल के रूप में संचित हाइड्रोजन की भारी मात्रा उपलब्ध है, अतः हम संलयन द्वारा ऊर्जा निर्माण की पर्याप्त शक्ति रखते हैं। सत्य है कि संभावनाएँ सचमुच आकर्षक प्रतीत होती हैं। संलयन प्रक्रियाओं की शुरूआत पृथ्वी पर अक्टूबर 1952 से ही हो चुकी थी जब प्रथम हाइड्रोजन बम का विस्फोट हुआ था। इसमें आवश्यक उच्च तापमान विखण्डन बम के द्वारा एक ट्रिगर के रूप में किया गया। फिर भी एक अनवरत एवं नियंत्रित ताप नाभिकीय शक्ति के स्रोत, संलयन रिएक्टर को प्राप्त किया जाना अभी तक बहुत कठिन सिद्ध हुआ है। चाहे जो भी हो इस लक्ष्य को बड़े उत्साह से प्राप्त किए जाने की प्रक्रिया जारी है क्योंकि ऊर्जा के इस स्रोत को, कम से कम जहाँ तक विद्युत-उत्पादन का प्रश्न है, अंततः एक मौलिक विकल्प के रूप में देखा जा रहा है। प्रोटॉन-प्रोटॉन प्रतिक्रिया, जो तारों एवं ग्रहों पर ऊर्जा के निर्माण का कारण है, पार्थिव संलयन रिएक्टर के लिए उपयुक्त नहीं है क्योंकि प्रारंभिक प्रक्रिया अत्यंत धीमी है (जैसाकि चित्र 1 में दिखाया गया है) जो अरबों वर्ष तक का समय लेती है। तारों के भीतरी भाग में इस प्रक्रिया द्वारा ऊर्जा निर्माण संभव है क्योंकि वहाँ तारकीय भीतरी भाग में प्रोटॉन का उच्च घनत्व विद्यमान है।

पृथ्वी पर इस प्रयोग के लिए जो सबसे उपयुक्त प्रतिक्रिया है, वह है D-D एवं D-T प्रतिक्रिया। D-T प्रतिक्रिया को चित्र(2) में दिखाया गया है। संयोगवश ड्यूटेरियम एवं ट्रिशियम परमाणिक ^2H एवं ^3H को इंगित करते हैं। ड्यूटेरियम ^2H हाइड्रोजन नाभिक को दर्शाता है जहाँ A=2 तथा ट्रिशियम(^3H) हाइड्रोजन नाभिक के A=3 को दर्शाता है। प्रतिक्रियाएँ इस प्रकार हैं:



यहाँ हम देख सकते हैं कि ट्रिशियम एक रेडियोधर्मी परमाणु है एवं हाइड्रोजन की भाँति सामान्यतः प्रकृति में नहीं पाया जाता। एक ताप नाभिकीय रिएक्टर के सफल परिचालन की बुनियादी आवश्यकताएँ इस प्रकार हैं: 1) कणों का उच्च घनत्व, 2) उच्च प्लाज्मा तापमान, 3) अधिक परिरोधन काल। प्रसंगवश, प्लाज्मा एक विद्युत रूप से अनावेशित, अत्यधिक आयनित तथा आयन, इलेक्ट्रॉन एवं आवेशित कणों से बना हुआ एक गैस है। यह पदार्थ की वह अवस्था है जो ठोस, तरल एवं सामान्य गैसों से भिन्न है।

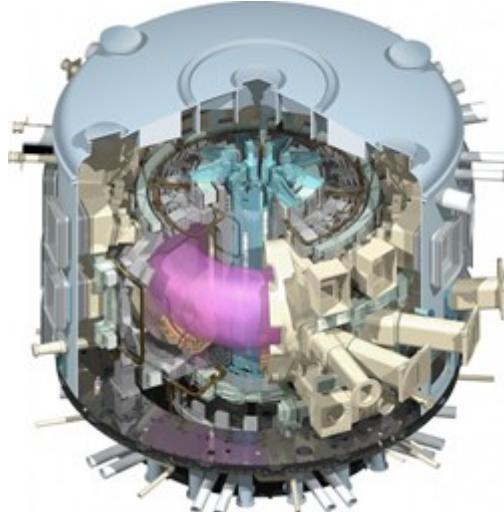


d-t प्रतिक्रिया

प्लाज्मा का परिरोधन करने के लिए एक तकनीक का प्रयोग करते हैं जिसमें उच्च चुम्बकीय क्षेत्र को प्रयुक्त करते हैं जब प्लाज्मा तापमान को बढ़ाए जाने की आवश्यकता होती है। इसे चुम्बकीय प्रतिरोधन कहते हैं। इस प्रकार के संलयन रिएक्टर को 'टोकामक' कहा जाता है जो रूसी शब्द का संक्षिप्त रूप है, जिसका मतलब है एक टोरोइडल चुम्बकीय कक्षा। इसमें चुम्बकीय क्षेत्र को एक टोरस के रूप में परिवर्तित कर दिया जाता है। इस प्रकार की कई बड़ी मशीनें बनाई गई हैं जिनमें ताप नाभिकीय रिएक्टर की आधारभूत प्रक्रियाओं का अध्ययन किया जाता है। भारत में प्लाज्मा अनुसंधान संस्थान, भाट, गांधीनगर में तापनाभिकीय रिएक्टर में आधारभूत प्रक्रियाओं का अध्ययन करने के लिए दो टोकामक निर्मित किये गये हैं। आशा की जा रही है कि संलयन ऊर्जा के व्यवहारिक रूप दिए जाने के पूर्व, एक सुनियोजित अंतर्राष्ट्रीय ताप नाभिकीय प्रायोगिक रिएक्टर (इटर) इसी दिशा में एक महत्त्वपूर्ण कदम है। 'इटर' का अर्थ लेटिन भाषा में 'एक रास्ता' भी है। आशा है कि इस महत्वाकांक्षी परियोजना को, जो इयूटेरियम-ट्रिशियम के संलयन प्रतिक्रियाओं द्वारा संपन्न होगी एवं जिससे 500 MW विद्युत का उत्पादन होगा। इसे दक्षिणी फ्रांस में सात देशों की सहभागिता से बनाया जा रहा है।

एक प्रविधि जिसे Inertial परिरोधन कहते हैं (चित्र 3), उसमें ईंधन की एक अल्प मात्रा को इतनी तीव्र गति से दबाया एवं तप्त किया जाता है कि ईंधन के फैलने एवं ठंडे होने के पूर्व ही संलयन प्रक्रिया संपन्न हो जाती है। इसमें अति लघु इयूटेरियम-ट्रिशियम पेलैट को ऊर्जावान बीम (किरणों) द्वारा सभी दिशाओं से तप्त एवं संपीड़ित किया जाता है। लेसर किरणों का प्रयोग इस क्षेत्र में सर्वाधिक हुआ है परन्तु इलेक्ट्रॉन एवं प्रोटॉन किरणों का प्रयोग भी सफल रहा है। फिर भी

सत्य यह है कि अभी भी नियंत्रित ताप नाभिकीय संलयन तक का मार्ग अत्यंत कठिन एवं लंबा है।



इटर का योजनाबद्ध आरेख

ब्रेकइवन पॉइंट

किसी भी मशीन या युक्ति को कार्यकुशल कहलाने के लिए यह आवश्यक है कि वह जिस परिमाण में शक्ति का उपभोग कर रही है उससे अधिक परिमाण में शक्ति का उत्पादन करें। ब्रेक-ईवन पॉइंट प्लाज्मा की वह अवस्था है जब एक संलयन रिएक्टर में वह कम से कम इतनी मात्रा में ऊर्जा उत्पन्न करे जितना उस प्लाज्मा के निर्माण के लिए ऊर्जा आवश्यक हो। 1990 में कुल्हम, यु. के. स्थित जॉइंट युरोपियन टोरस (जेर्फीटी) ने विश्व में पहली बार नियंत्रित ऊर्जा उत्पादन का प्रदर्शन किया। हालांकि 'इटर' से इससे भी अधिक मात्रा में शक्ति उत्पादन की उम्मीद है। 50 MW निविष्ट शक्ति के लिए इटर 500 MW शक्ति उत्पन्न करेगा। अगर ऐसा हुआ तो इटर संलयन ऊर्जा के उत्पादन की दिशा में इतिहास का एक नया अध्याय खोलेगा।

संदर्भ

1. Concepts of Modern Physics by Arthur Beiser 2003 Pub: Tata Mc Grow- Hill
2. Nuclear Physics by Irving Kaplan 1962 Pub: Addison-Wesley / Oxford & IBH
3. Quantum Physics by Robert Eisberg & Robert Resnick 2002 John Wiley
4. Physics by David Halliday, Robert Resnick, and Kenneth S Krane 1992 John Wiley
5. <http://www.plasmacoalition.org>: a highly resourceful website on plasmas and their applications.
6. Numerous articles in Wikipedia

‘इटर’ की कहानी

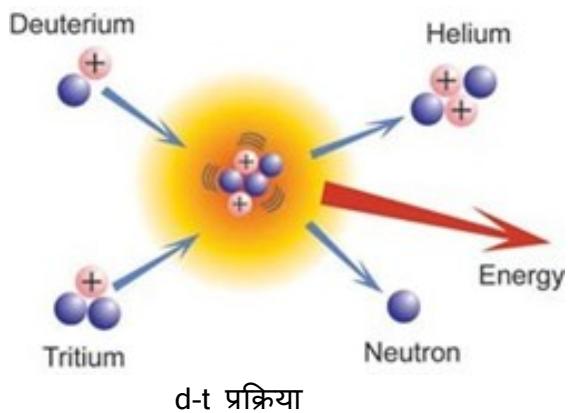
इटर का जन्म

उन्नीसवीं एवं बीसवीं सदी में जीवाश्म ईंधन ने सभ्यता को स्वरूप दिया। परन्तु ऊर्जा की आवश्यकता तीव्र गति से बढ़ने लगी। 21वीं सदी के अंत तक विश्व की ऊर्जा की आवश्यकता तिगुनी हो जाने की संभावना है। जीवाश्म ईंधन धीरे-धीरे कम होता जा रहा है और यह पर्यावरण को भी दुष्प्रभावित करता है। अतः वातावरण में ग्रीन हाउस गैस को बढ़ाए बगैर ऊर्जा की आवश्यकता को किस प्रकार पूरा किया जाए? स्पष्ट है कोई भी देश अकेला इस चुनौती का सामना नहीं कर सकता है। इसके समाधान हेतु 1985 में इटर परियोजना का जन्म हुआ, जिनेवा में महाशक्तिशाली देशों के सम्मेलन में बहुत गहरे विचार विमर्श के परिणाम स्वरूप रूस, अमेरिका, कोरिया, चीन, जापान, भारत एवं यूरोपियन संघ ने मिलजुलकर सर्वसहमति से दुनिया की आधी जनसंख्या के प्रतिनिधित्व में इटर परियोजना आरंभ की गई। लेटिन भाषा में इटर का अर्थ है “रास्ता”। यह बड़ी परियोजना अंतर्राष्ट्रीय सहयोग का अनोखा उदाहरण है। एक्स-इन-प्रोविंस दक्षिणी फ्रांस के कडराच में इटर को स्थापित किया जा रहा है। इटर का अर्थ है “अंतर्राष्ट्रीय ताप नाभिकीय प्रायोगिक रिएक्टर”।

वास्तव में इटर, दशकों से अर्जित संलयन खोज का परिणाम है। पिछले कुछ दशकों में 200 से ज्यादा टोकामक बनाए गए हैं। जिससे इटर परियोजना का रास्ता खुल सका। सबसे छोटे एक सघन डिस्क के बराबर और सबसे बड़ा पांच मंजिली इमारत के बराबर था। इटर इन सभी मशीनों से अर्जित जान व अनुभव का ही परिणाम है। इटर कितना बड़ा होगा? यह 73 मीटर ऊँचा (60 मीटर धरातल के ऊपर एवं 13 मीटर सतह के नीचे) या आज के समय के सबसे बड़े टोकामक के आकार से दोगुने आकार का होगा। टोकामक एक मशीन है जिसमें प्लाज्मा को चुम्बकीय क्षेत्र का उपयोग कर टोरस में या डोनट में बंधित किया जाता है। स्थिर प्लाज्मा प्राप्त करने के लिए चुम्बकीय बल रेखायें टोरस के चारों तरफ हेलिकल आकृति में रहती हैं। इटर की उत्पत्ति संलयन पावर प्लांट को प्रदर्शित करने की राह में एक महत्वपूर्ण एवं आवश्यक कदम होगा।

एक साधारण विचार

सैद्धांतिक रूप से इटर में ऊर्जा उत्पादन एक सरल तरीका है। हाइड्रोजेन के दो आइसोटोप इयुट्रेरियम व ट्रिशियम को एक दूसरे के साथ अत्यधिक दबाव की स्थिति में रखा जाए तब हमें एक अणु हीलियम एवं अत्यधिक ऊर्जा वाले न्यूट्रॉन प्राप्त होते हैं (चित्र 1)। यह उत्पाद प्रारंभ में लिये गए अवयवों से भार में थोड़ा कम होता है एवं इस सूक्ष्म द्रव्यमान में कमी एक बड़ी ऊर्जा के रूप में पैदा होती है। इसे हम आइंस्टीन के द्रव्यमान-ऊर्जा के समीकरण $E=mc^2$ से व्यक्त कर सकते हैं। एक बार इस उत्पादित ऊर्जा को योग्य तरीके से सुसज्जित कर लिया जाए तो हम नियंत्रित नाभिकीय संलयन द्वारा विश्व में ऊर्जा की समस्या का समाधान कर सकते हैं।



एक उलझन

परंतु यहाँ एक गड़बड़ है। संलयन के आण्विक घटक जिनसे हमने आरंभ किया था वे धनावेशित हैं एवं प्रत्येक नाभिक के समान एक दूसरे को विकर्षित करते हैं। सूर्य के केंद्र में अत्यधिक गुरुत्वीय दबाव की वजह से 15 मिलियन डिग्री सेन्टीग्रेड पर संलयन की प्रतिक्रिया होती है। परंतु इटर जैसी मशीन में संलयन के लिए 150 मिलियन डिग्री सेन्टीग्रेड तापमान की आवश्यकता है। पृथ्वी पर कोई भी सामग्री इस तापमान को सहन नहीं कर सकती। अतः संलयन को हासिल करने के लिए इटर टोकामक मशीन का उपयोग करेगा। टोकामक तीव्र चुम्बकीय क्षेत्र के प्रभाव से प्रतिक्रिया करने वाले प्लाज्मा को, भट्टी की दीवार से दूर रखता है।

इटर कितनी ऊर्जा का उत्पादन करेगा?

इटर कितनी ऊर्जा का उत्पादन करेगा? इटर का लक्ष्य संलयन द्वारा 500 मेगा वॉट ऊर्जा का उत्पादन करना है। इटर वास्तव में ऊर्जा संयंत्र के प्रदर्शन का अग्रदूत (प्रणेता) होगा जिसे डेमो कहेंगे। डेमो में संलयन ऊर्जा पहले वाष्प उत्पादित करेगी और फिर टरबाइनों के माध्यम से 1000 मेगा वॉट निर्धारित विद्युत शक्ति पैदा की जाएगी। यह विद्युत ऊर्जा 25 लाख भारतीय घरों में बिजली की आपूर्ति करने वाले एक शक्ति संयंत्र के बराबर है।

संलयन के लिए पानी!

इयूटेरियम लगभग असीम मात्रा में समुद्र जल से निकाला जा सकता है परंतु ट्रिशियम की मात्रा संसार के सभी भागों में सीमित है - अंदाज़न केवल 20 किलोग्राम। अतः संलयन शक्ति संयंत्र को स्वयं अपने लिए ट्रिशियम उत्पादन करना होगा। इस उद्देश्य के लिए सभी लिथियम द्वारा बनाए हुए ट्रिशियम प्रजनन मॉड्यूल का उपयोग किया जाएगा। लिथियम के ऊपर न्यूट्रॉन द्वारा बमबारी करने से वह नाभिकीय प्रक्रिया के दौरान ट्रिशियम के रूप में प्राप्त होता है। लिथियम हल्की धातु है और लैड शीशे की तरह लिथियम भी बहुतायत में मिलता है। इटर का एक उद्देश्य ट्रिशियम प्रजनन मॉड्यूल का प्रायोगिक परीक्षण भी है।

सूर्य के गर्भ से भी दस गुना गरम

सूर्य के गर्भ से भी दस गुना अधिक तापमान इटर कैसे संभालेगा? प्लाज्मा को ठोस चुम्बकीय क्षेत्र में बंधित करने से यह संभव हो सकेगा। विभिन्न आकार के चुम्बकीय संलयन मशीनों को सन् 1950 के प्रारंभ से ही अलग-अलग देशों में विकसित किया गया था। लेकिन सन् 1968 में सोवियत संघ को विशेष सफलता मिली। वहाँ के वैज्ञानिक पहली बार उच्च तापमान स्तर तक पहुंचने और प्लाज्मा को अधिक समय तक बंधित रखने में सफल रहे, जो संलयन के लिए दो मुख्य मानदंड हैं। इस सफलता के पीछे क्या रहस्य था? दरअसल इस सफलता के पीछे एक क्रांतिकारी डोनट-आकार का चुंबकीय परिसीमन उपकरण था, जिसे 'टोकामक' कहा जाता है। इसे मॉस्को के कुर्चाटोव इन्स्टिट्यूट में विकसित किया गया। तभी से संलयन अनुसंधान में टोकामक एक महत्वपूर्ण परिकल्पना के रूप में उभरा।

इटर का पर्यावरण पर प्रभाव

संलयन द्वारा उत्पन्न ऊर्जा को सोखने के लिए 3 मिलियन घन मीटर पानी प्रति वर्ष आवश्यक होगा जो करीब स्थानीय नदी वर्डन से पहुँचाये जाने वाले कुल पानी के पाँचवें भाग के बराबर होगा। ट्रिशियम की मात्रा नियामक सीमा से 100 गुना कम होने का अंदाजा लगाया जा रहा है। सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि संलयन प्रक्रिया से लंबे समय तक रहनेवाला कचरा पैदा नहीं होगा। मशीन के कुछ घटकों के सक्रियण से कम मात्रा के रेडियोधर्मों कचरे पैदा होंगे। प्रसंस्करण के बाद सभी कचरों को पैक करके साइट पर संग्रहित करके रखा जाएगा।

इटर साइट के 180 हेक्टर क्षेत्र में 39 दुर्लभ या संरक्षित प्रजातियों के भरणपोषण में लाभ होगा। दो क्षेत्रों के किनारों पर फैसिंग लगा दी गई है जहाँ ऑक्सिटन क्रिकेट, तितलियों की दो प्रजातियाँ सुरक्षित रखी जाएंगी। बुडलार्क पक्षी के लिए धोंसले का स्थान एवं दुर्लभ ऑर्किड भी सुरक्षित रखे जायेंगे। इटर के प्लेटफार्म को समस्तल करने के लिए 2.5 मिलियन घन मीटर जितनी भूमि की मिट्टी और पत्थरों को खिसकाया गया, जिसमें से 2/3 मिट्टी और पत्थरों का उपयोग इटर निर्माण में लगाया गया है।

एक संक्षिप्त इतिहास

लगभग सत्तर वर्ष पहले वैज्ञानिकों ने प्रथम बार सूर्य के प्रकाश से संबंधित भौतिकविज्ञान को समझा। सूर्य के अंदर की ऊर्जा का उत्पादन समझा। सूर्य और अन्य तारे लगातार संलयन प्रक्रिया द्वारा हाइड्रोजन को हीलियम में परिवर्तित करते रहते हैं और इस प्रक्रिया में अत्यधिक ऊर्जा उत्पन्न होती है। सन् 1950 के मध्य में इस प्रकार की संलयन प्रक्रिया के लिए मशीनों का निर्माण सोवियत संघ, संयुक्त राज्य, संयुक्त राज्य अमेरिका, फ्रांस, जर्मनी और जापान में हुआ। फिर भी तारों से आने वाली ऊर्जा को प्राप्त करना लोहे के चने चबाने जैसा था।

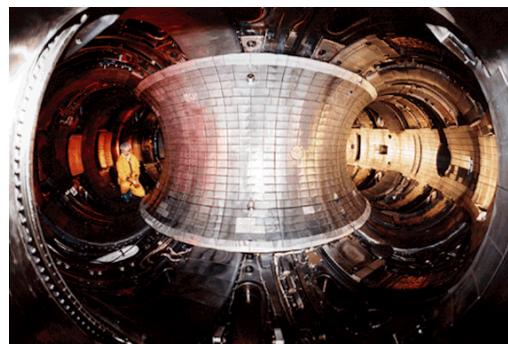


दुनिया का पहला टोकामक उपकरण: मास्को में कर्चटोव संस्थान में रूसी टी 1 टोकामक।

सन् 1950 और 1960 के अंतिम वर्षों में सोवियत संघ ने डोनट आकार की मशीन जिसे टोकामक कहा गया है, उसकी खोज की और संलयन अनुसंधान की प्रमुख संकल्पना की दिशा में एक पथप्रदर्शक बना। इसके बाद टोकामक कई मील के पत्थरों से गुजरा। संलयन के लिए हाइड्रोजन के दूसरे आइसोटोप ड्यूट्रियम व ट्रिशियम को ईंधन की तरह उपयोग करके प्रयोग किए गए। 1990 के शुरुआती वर्षों में टोकामक फ्यूजन टेस्ट रिएक्टर (TFTR), प्रिंस्टन, अमेरिका और जोइन्ट यूरोपियन टोरस (JET), कुलहम, इंग्लैंड में बना। JET ने अंतर्राष्ट्रीय सहयोग में एक बड़ा कदम रखा एवं 1991 में प्रथम बार संलयन शक्ति उत्पन्न की। चित्र 3A एवं चित्र 3B जिस समय JET, TFTR, मशीन में संलयन शक्ति का उत्पादन किया गया उसी समय टोर सुप्रा टोकामक जो EURATOM-CEA में स्थित है वहाँ लंबे समय के लिए संलयन को प्राप्त किया गया। यह फ्रांस के कडराच न्युक्लियर रिसर्च सेंटर में है। इसके पश्चात TRIAM-IM टोकामक, जो जापान में स्थापित है वहाँ एवं अन्य स्थानों में संलयन मशीनों में संलयन को प्राप्त किया गया। हमें यह जानना चाहिए कि जापान में JT-60 ने संलयन पर निर्भर तीन मुख्य मानदण्डों के अधिकतम मूल्य को प्राप्त किया अर्थात प्लाज्मा घनत्व, तापमान, और बंधन में रखने का समय। उसी समय अमेरिका की संलयन मशीनों में प्लाज्मा तापमान कई सौ-मिलियन डिग्री सेंटिग्रेट प्राप्त किया गया।



जाइन्ट यूरोपियन टोरस



टीएफटीआर

भारत में ताप नाभिकीय-रिएक्टर की प्रक्रिया को समझने के लिए आईपीआर, गाँधीनगर में भी दो टोकामक बनाए गए। आदित्य टोकामक पहला स्वदेशीय अभिकल्पित एवं निर्मित टोकामक है। यह

एक मध्य आकार का टोकामक है जो कि 1989 से (चित्र 4A) कार्यरत है। दूसरा SST-1 एक स्थिर अवस्था अतिचालक टोकामक है (चित्र 4B)। यह एक दूसरी पीढ़ी की मशीन है जो 1000 सेकण्ड तक प्लाज्मा उत्पन्न कर सकती है। यह 2010 से प्रचालनरत है।



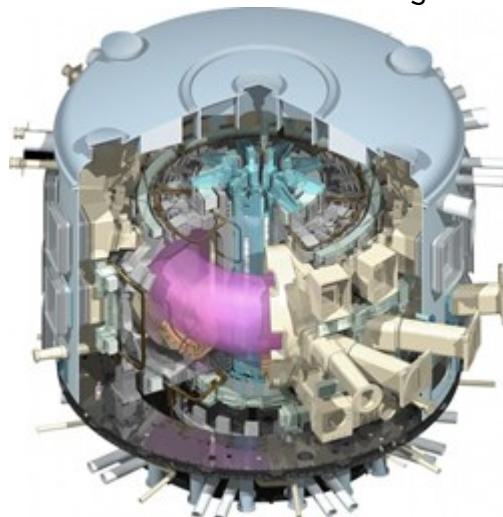
आदित्य



एसएसटी-1

इटर का लक्ष्य: $Q \geq 10$

इटर एक महत्वपूर्ण वैज्ञानिक प्रयोग (चित्र 5) है, जिसका उद्देश्य संलयन ऊर्जा को उत्पन्न करने की तकनीकी एवं वैज्ञानिक संभाव्यता का प्रदर्शन करना है। अभिव्यक्ति $Q \geq 10$ इस प्रयोग के लक्ष्य को स्पष्ट करती है। इस सूत्र में दिया गया Q संलयन ऊर्जा और निविष्ट ऊर्जा के अनुपात को दर्शाता है। $Q \geq 10$ इटर परियोजना का वैज्ञानिक लक्ष्य दर्शाता है, जो कि स्पष्ट है कि इटर संयंत्र में जितनी ऊर्जा खर्च की जाएगी उससे 10 गुना ऊर्जा का उत्पादन करना है।



इटर टोकामक का एक कटअवे दृश्य जिसमें निर्वात पात्र के भीतर डोनट आकार में प्लाज्मा को दर्शाया गया है।

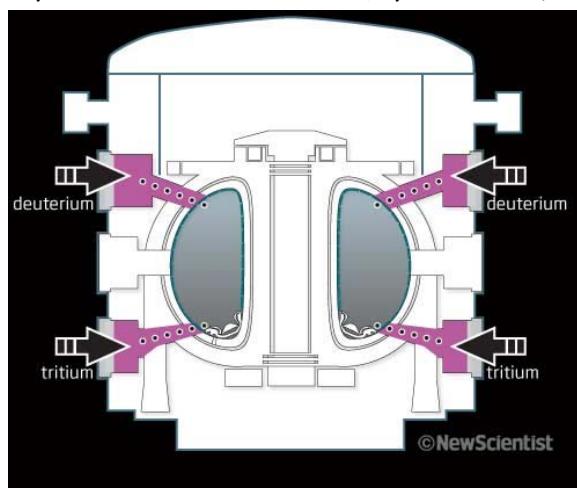
किसी भी ऊर्जा संयंत्र में यह आवश्यक है कि निविष्ट ऊर्जा की तुलना में उत्पादित ऊर्जा अधिक मात्रा में होनी चाहिए। जब निविष्ट ऊर्जा और उत्पादित ऊर्जा बराबर हो तो इसे 'ब्रेक-इवन पॉइंट' माना जाता है। JET, TFTR और JT-60 संयंत्रों में वैज्ञानिक बहुत समय पहले ब्रेक-इवन

पाइंट स्थिति पर पहुँच गये थे, जहाँ एक उपकरण उतनी ही ऊर्जा प्रदान करता है जितनी संलयन उत्पादन के लिए आवश्यक है। लेकिन इटर का उद्देश्य इससे कई आगे है। इटर संलयन अभिक्रिया आरंभ करने के लिए आवश्यक ऊर्जा से दस गुना ऊर्जा का उत्पादन करेगा। निविष्ट ऊर्जा 50 MW के लिए इटर 500 MW ऊर्जा उत्पन्न करेगा। यदि सब कुछ ठीक रहा तो यह संयंत्र 2027 तक कार्यरत हो जाएगा। इससे इटर सन् 2030 तक DEMO नाम के प्रदर्शन ऊर्जा संयंत्र के लिए मार्ग प्रशस्त करेगा। इस दरमियान विश्व भर में अन्य संलयन संयंत्रों में अनुसंधान जारी रहेगा। इस सदी के मध्य तक DEMO की संलयन ऊर्जा ग्रिड में प्रविष्ट किये जाने की संभावना है। आशा है इस सदी की अंतिम तिमाही में संलयन युग का प्रारंभ होगा।

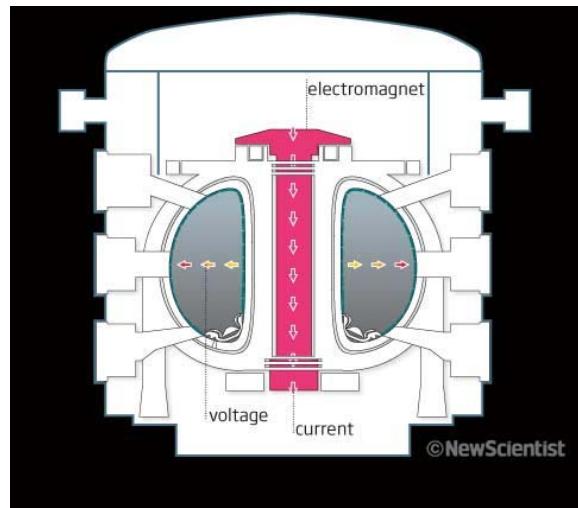
यह बहुत ही रोचक बात है कि विश्व की आधी से अधिक आबादी इटर के निर्माण का प्रतिनिधित्व कर रही है। हालांकि इटर की परिकल्पना का जन्म सन् 1985 में हुआ था, लेकिन औपचारिक रूप से इसकी स्थापना 24 अक्टूबर, 2007 में हुई जब चीन, यूरोपीय संघ, भारत, जापान, कोरिया, रूसी संघ और संयुक्त राज्य अमेरिका के बीच इटर परियोजना के लिए एक संधि हुई। इटर का संकल्पनात्मक अभिकल्पन कार्य 20 वर्ष पहले 1988 में शुरू हो चुका था। इसकी अंतिम अभिकल्पना को 2001 में स्वीकृति मिली। वर्ष 2020 के आसपास इसका निर्माण कार्य पूरे किये जाने की अपेक्षा है।

इटर कैसे कार्य करता है

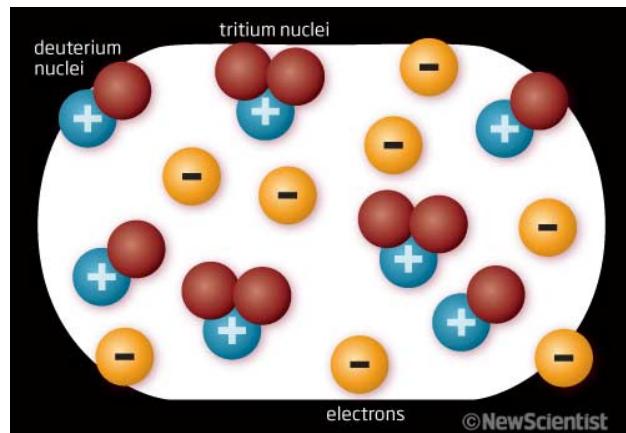
विभिन्न चरणों में इटर किस प्रकार कार्य करेगा, इसकी चर्चा हम यहाँ करेंगे।



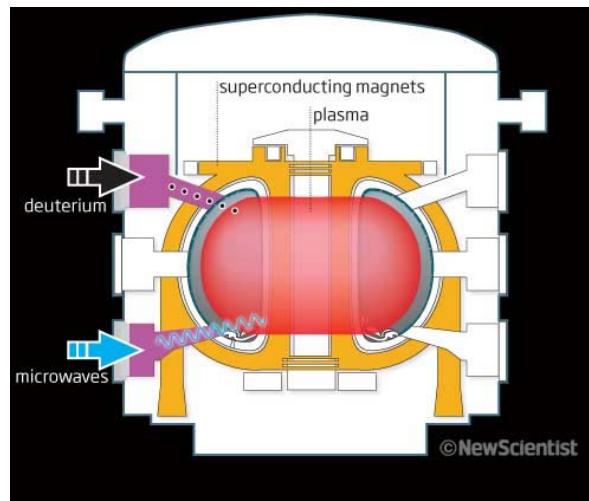
चरण 1: टोकामक नाम के डोनट आकार के निर्वात पात्र में ड्यूटेरियम और ट्रिशियम गैस के कशें को इंजेक्ट किया जाता है। इस गैस का वजन एक डाक स्टैम्प से भी हल्का होता है और इससे एक ओलंपिक स्वीमिंग पूल के एक तिहाई जितना भाग भरा जा सकता है।



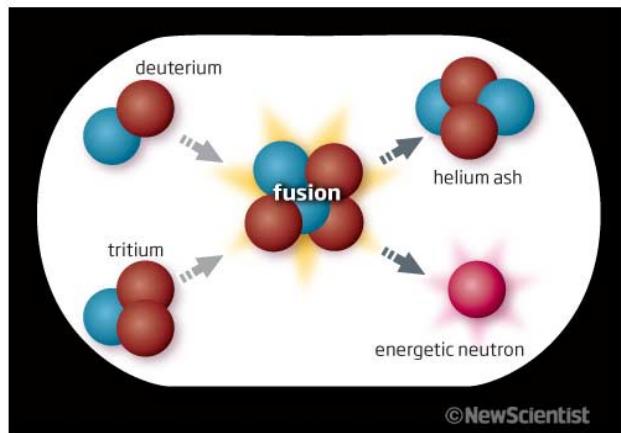
चरण 2: इस विद्युतचुंबक (केन्द्रीय सोलेनोइड) से प्रसारित विद्युत, गैस में वोल्टता उत्पन्न करती है।



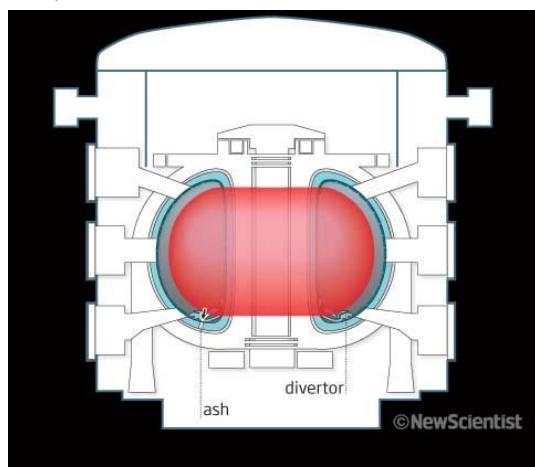
चरण 3: वोल्टेज के कारण ड्यूट्रियम और ट्रिशियम के परमाणु अलग हो जाते हैं। वे कुछ माइक्रो सेकण्ड में ही आवेशित परमाणुओं (आयनों) में बदलकर एक कण सूप बन जाते हैं, जिसे प्लाज्मा कहते हैं।



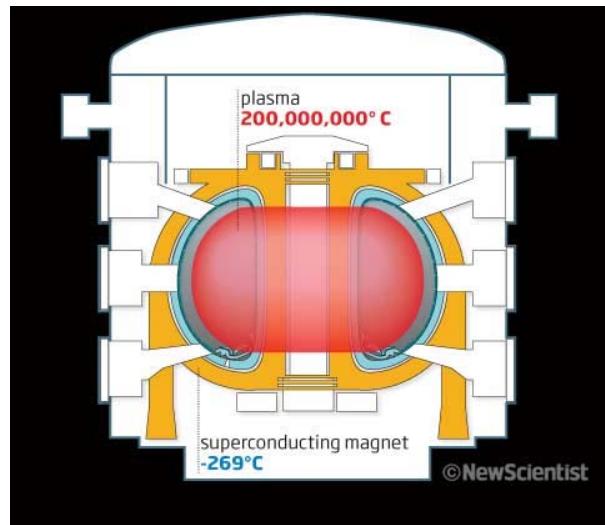
चरण 4: अतिचालक चुंबकीय कॉयलों की श्रृंखला से निर्मित चुंबकीय क्षेत्रों द्वारा निर्वात पात्र में प्लाज्मा को बंधित किया जाता है। चुंबकीय कॉयल प्लाज्मा में विद्युत धारा को उत्पन्न करते हए उसे परिसीमित कर प्लाज्मा को 10 मिलियन °C तापमान तक ले जाते हैं। लेकिन संलयन प्रक्रिया के लिए यह तापमान अभी तक पर्याप्त नहीं है।



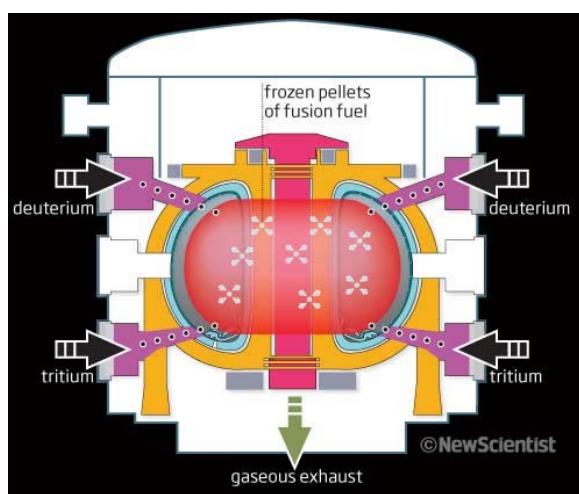
चरण 5: तापमान को और बढ़ाने के लिए वैज्ञानिक, प्लाज्मा में रेडियो और सूक्ष्मतरंगों व इयूट्रियम परमाणुओं के उच्च-ऊर्जा वाले किरणपुंजों को प्रेषित कर देते हैं। इससे प्लाज्मा 100-200 मिलियन °C के तापमान तक पहुंच जाता है, जो इयूट्रियम और ट्रिशियम नाभिक के फ्यूज होने के लिए पर्याप्त तापमान है।



चरण 6: संलयन प्रक्रिया से शक्तिशाली न्यूट्रॉन्स और हीलियम कण उत्पन्न होते हैं जो प्लाज्मा में अपनी ऊर्जा निक्षेप करते हए उसे 'राख' बनने से पहले तप्त बनाए रखते हैं। 'राख' को अंततः डायवर्टर के माध्यम से बलपूर्वक बाहर निकाला जाता है।



चरण 7: न्यूट्रॉन और अन्य कण, प्लाज्मा-मुखित घटकों की टाइलों पर बमबारी कर उन्हें गरम करते हैं। भविष्य के पावर स्टेशन में यह ऊष्मा बिजली बनाने के लिए इस्तेमाल की जाएगी। अतिचालक चुंबक निरपेक्ष शून्य के निकट परिचालित होते हैं। प्लाज्मा के मध्यभाग से चुंबकों की दूरी तक सबसे अधिकतम तापमान प्रवणता दिखाई देती है।



चरण 8: प्रक्रिया को जारी रखने के लिए प्लाज्मा को निरंतर ड्यूटीरियम और ट्रिशियम ईंधनों से भरते रहना आवश्यक है। गैस के निकास से अनजले ईंधन को भी पुनः प्राप्त किया जाता है और संलयन के ईंधन में जमी हुई गुटिकाओं को प्लाज्मा में गहराई तक फायरिंग करके प्रक्रिया को लयबद्ध किया जाता है।

इटर के तथ्य एवं आंकड़े
इटर के टोरोइडल चुम्बकीय क्षेत्र के लिए 100,000 किलोमीटर की लंबाई के नियोबियम-टिन (Nb3Sn) अतिचालक स्ट्रैंड की आवश्यकता है। इटर के लिए उत्पादन किये जा रहे इस Nb3Sn स्ट्रैंड को भूमध्य रेखा पर दो बार लपेटा जा सकेगा।
इटर मशीन का वजन 23,000 टन होगा। इटर टोकामक तीन एफेल टॉर्चर्स जितना भारी होगा।
इटर टोकामक मशीन अब तक की सबसे बड़ी मशीन निर्मित होगी, जिसमें प्लाज्मा की मात्रा 840 घन मीटर होगी। वर्तमान प्रचालनरत टोकामकों में प्लाज्मा की अधिकतम मात्रा 100 घन मीटर है।
सन् 2018-19 में इटर निर्माण के चरम मोड़ पर 5,000 लोग इटर में कार्य कर रहे होंगे।
परिवहन वाहन के साथ सबसे भारी प्रणाली का वजन लगभग 900 टन होगा। सबसे बड़ी प्रणाली की ऊंचाई लगभग चार मंजिला इमारत या 10.6 मीटर जितनी ऊंची होगी।
इटर टोकामक में D-आकार की 18 टोरोइडल क्षेत्र कॉयलों में प्रत्येक कॉयल का वजन 360 टन होगा, जो पूरी तरह भरे हुए 747-300 बोइंग हवाई जहाज जितना होगा। प्रत्येक टोरोइडल क्षेत्र कॉयल की ऊंचाई 14 मीटर और चौड़ाई 9 मीटर होगी।
इटर का निर्माण 50 मेगावॉट निविष्ट ऊर्जा के लिए 500 मेगावॉट की ऊर्जा का उत्पादन या निविष्ट ऊर्जा से 10 गुना ऊर्जा का उत्पादन करने के लिए किया गया है। वर्तमान रिकार्ड 16 मेगावॉट की संलयन ऊर्जा पैदा करने के लिए यूरोपीय जेट संयंत्र के पास है, जो कुल्हाम, यूके में स्थित है।
हमारे सूर्य का सतही तापमान 6,000°C और उसके भीतरी भाग का तापमान 15 मिलियन°C है। हमारे सूर्य के भीतरी भाग का घनत्व और तापमान के संयुक्त असर से संलयन प्रक्रिया होने के लिए आवश्यक स्थितियाँ निर्मित होती हैं। हमारे ब्रह्मांड के गुरुत्वाकर्षण बलों को पृथ्वी पर पुनः पैदा नहीं किया जा सकता और इस कारण प्रयोगशाला में और ऊंचे तापमानों की आवश्यकता होती है। इटर टोकामक में तापमान 150 मिलियन °C या हमारे सूर्य के भीतरी भाग के तापमान से 10 गुना तापमान तक पहुँचेगा।
इटर साइट की मुख्य विशेषता है कि सन् 2009 में यह मानव द्वारा 180 हेक्टर क्षेत्रफल में समतल प्लेटफार्म पर तैयार किया गया है। 42 हेक्टर का प्लेटफार्म 1 किलोमीटर लंबा और 400 मीटर चौड़ा है, जो कि 60 फुटबॉल के मैदान जितना बड़ा है।
टोकामक भवन का निर्माण जमीन के ऊपर 60 मीटर और जमीन के नीचे 13 मीटर होगा और यह इटर साइट की सबसे लंबी संरचना होगी।
इटर परियोजना के दस-वर्ष के निर्माण चरण की अनुमानित लागत 13 अरब युरो है, जो इटर के सात सदस्यों द्वारा साझा की गई है। सदस्यों द्वारा धन का योगदान करने के बजाए अधिकतर प्रणालियों के घटकों की आपूर्ति की जाएगी।

इटर परियोजना में भारत का योगदान

इटर का निर्माण अधिकांश रूप से वस्तु-रूप में सहभागी देशों द्वारा किया जाएगा। इटर के लिए सहभागी देशों द्वारा निर्मित घटकों की आपूर्ति एवं संस्थापन किया जाएगा। इटर-भारत एक भारतीय डोमेस्टिक ऐंजेंसी है, जो गांधीनगर, गुजरात में स्थित है। भारत की ओर से इटर के लिए घटकों का विकास, निर्माण एवं उपलब्ध कराने के दायित्व के उद्देश्य से इटर-भारत का निर्माण किया गया है। इटर के प्रयोग के लिए भारत लगभग 500 मिलियन यूएस डॉलरों जितनी कीमत वाले उपकरण का योगदान देगा(चित्र 6), और इसके बाद के प्रचालनों एवं प्रयोगों में भी अपनी प्रतिभागिता देगा। भारत मुख्य रूप से एक स्टेनलेस क्रायोस्टेट का निर्माण करेगा, जो इटर के लिए बाहरी निर्वात आवरण का गठन करेगा। इसका व्यास 28 मीटर एवं लंबाई 26 मीटर होगी। 2% बोरोन स्टील से बनी निर्वात पात्र शील्ड दो दीवारों के बीच का स्थान धेरेंगी, जिसका अभिकल्पन एवं निर्माण भी भारत में ही किया जाएगा। भारत आठ की संख्या में 2.5 मेगावॉट आयन साइक्लोट्रॉन तापन स्रोतों का निर्माण करेगा जो शक्ति प्रणालियों एवं नियंत्रणों से पूर्ण होंगे। साथ ही इटर में प्लाज्मा ज्वलन की भौतिकी के बारे में महत्वपूर्ण जानकारी प्रदान करने वाली एक नैदानिकी न्यूट्रल बीम प्रणाली को भी निर्मित किया जाएगा। अंत में, भारत क्रायो-वितरण एवं जल शीतलन उपप्रणालियों के लिए योगदान देगा।

इटर और उसके बाद

इटर परियोजना का उद्देश्य (नियंत्रित) ऊर्जा नाभिकीय संलयन के बारे में आवश्यक जानकारी को अर्जित करना है, जिससे अगले चरण के एक प्रदर्शन संलयन शक्ति संयंत्र का अभिकल्पन एवं निर्माण किया जा सकें। इटर के माध्यम से वैज्ञानिक भविष्य में बनने वाले संयंत्र में प्लाज्मा किन परिस्थितियों में होगा, उसका अनुमान लगा सकेंगे। सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि इटर शुद्ध ऊर्जा का उत्पादन करने वाला पहला संलयन प्रयोग होगा जो सन् 2027 में कार्यरत हो जाएगा। यह विशेष तकनीकियों का भी परीक्षण करेगा, जिसमें ऊर्जा, नियंत्रण, नैदानिकी एवं प्रणाली का सुदूर रखरखाव शामिल हैं। इटर की सीमा यहां तक ही सीमित नहीं है। बल्कि यह बड़े पैमाने पर विद्युत शक्ति के उत्पादन का प्रदर्शन करने वाला पहला संयंत्र एवं ट्रिशियम ईंधन के स्वावलंबन की दिशा में इटर एक सेतु है। इटर के बाद अगला कदम है: प्रदर्शन ऊर्जा संयंत्र या DEMO का निर्माण। इस संयंत्र का संकल्पनात्मक अभिकल्पन 2017 तक पूरे किये जाने की संभावना है। यदि सब कुछ ठीक रहा तो औद्योगिक युग में सन् 2030 तक संलयन की दिशा में DEMO का प्रचालन आरंभ करते हुए सन् 2040 तक यानी इस सदी के मध्य में ग्रिड में संलयन ऊर्जा को डाला जाएगा।

अभी इटर का निर्माण किया जा रहा है और DEMO संकल्पनात्मक चरण है। लेकिन इटर के समर्थन में पूरक अनुसंधान एवं विकास के लिए विश्व भर में कई विशेषताओं एवं उद्देश्यों से युक्त विभिन्न संलयन संयंत्र कार्यरत रहेंगे। यदि इटर और DEMO सफल हो जाते हैं तो इस सदी की अंतिम तिमाही तक हमारा विश्व संलयन युग में प्रवेश करेगा, तब मानव जाति को अपनी

आवश्यक ऊर्जा का एक बड़ा हिस्सा प्राप्त होगा। यह अनन्त ऊर्जा पर्यावरण के अनुकूल एवं सर्वव्यापी उपलब्ध स्रोतों से मिलेगी।

संदर्भ

1. www.iter.org - website of ITER
2. *New Scientist* (09 October 2009) including Images in How ITER Works Steps 1-8.
www.iter-india.org

प्लाज़मा अनुसंधान संस्थान - एक परिचय

प्रस्तावना

प्लाज़मा अनुसंधान संस्थान अंग्रेजी में इंस्टिट्यूट फॉर प्लाज़मा रिसर्च के नाम से जाना जाता है। यह भारत का एक प्रमुख संस्थान है जहां प्लाज़मा विज्ञान के विभिन्न पहलुओं पर शोध किया जाता है, जिसमें मौलिक प्लाज़मा भौतिकी, चुम्बकीय परिसीमित तापीय प्लाज़मा, संलयन रिएक्टर तथा औद्योगिक प्रयोग के लिए प्लाज़मा तकनीकियों के उपयोग शामिल हैं। प्लाज़मा विज्ञान का मुख्य और चरम लक्ष्य संलयन रिएक्टरों का निर्माण करना है, जिससे विश्व में ऊर्जा की बढ़ती आवश्यकताओं का समाधान हो सके। परंपरागत ऊर्जा के स्रोत जैसे कोयला, पेट्रोलियम गैस, और प्राकृतिक गैस के भंडार कुछ दशकों में खत्म होने वाले हैं। संसार में जिस गति से प्रगति हो रही है और सामाजिक विकास बढ़ रहा है उससे ऊर्जा की मांग बहुत तेजी से बढ़ रही है और संभव है कि विकास में परंपरागत ऊर्जा पर्याप्त न हो। इन परिस्थितियों में यह बहुत जरूरी हो गया है कि ऊर्जा के दीर्घकालिक स्रोतों का पता लगाया जाए। संलयन ऊर्जा संसार की हरदम बढ़ती हुई ऊर्जा की आवश्यकताओं का एक समाधान है।

प्लाज़मा अनुसंधान संस्थान साबरमती नदी के तट पर इंदिरा पुल के समीप भाट गाँव (जिला- गाँधीनगर), गुजरात में स्थित है। यह अहमदाबाद हवाई अड्डे से लगभग 5 किलोमीटर तथा अहमदाबाद रेलवे स्टेशन से 14 किलोमीटर की दूरी पर है। प्लाज़मा अनुसंधान संस्थान की जड़े 1970 के दशक के शुरू में भौतिकी अनुसंधान प्रयोगशाला (पीआरएल), अहमदाबाद में जो प्लाज़मा भौतिकी पर सैद्धान्तिक तथा प्रायोगिक अध्ययन हेतु प्रारम्भ किये गए थे, उस संगत एवं अंतःक्रियात्मक कार्यक्रम से जुड़ी है। शुरूआती अध्ययन अन्तरिक्ष प्लाज़मा भौतिकी पर केंद्रित था। बाद में सन् 1978 में उच्च शक्ति प्लाज़मा प्रयोग शुरू किए गये जिसमें टोरोइडल उपकरणों में तीक्ष्ण इलेक्ट्रॉन पुँजों का प्रयोग करके सुदृढ़ टोराइड एवं इलेक्ट्रॉन छल्ला बनाया गया। इस प्रकार संलयन - संबद्ध प्रयोग करने की ओर झुकाव बढ़ा।

इसके बाद चुम्बकीय परिसीमित उच्च तापीय प्लाज़मा पर अध्ययन शुरू करने हेतु एक प्रस्ताव भारत सरकार को सौंपा गया जिसकी मंजूरी सन् 1982 में मिली। इसके परिणाम स्वरूप विज्ञान तथा तकनीकी विभाग द्वारा समर्थित प्लाज़मा भौतिकी कार्यक्रम (पीपीपी) की स्थापना पीआरएल में हुई। इसी दौरान भारत के प्रथम टोकामक आदित्य का अभिकल्पन एवं अभियांत्रिकी तथा निर्माण कार्य प्रारम्भ किया गया। सन् 1984 में ये गतिविधियाँ वर्तमान संस्थान के परिसर में की जाने लगी। सन् 1986 में पीपीपी, विज्ञान तथा तकनीकी विभाग के अंतर्गत एक स्वशासी संस्थान - प्लाज़मा अनुसंधान संस्थान के रूप में परिणित हुआ। यहाँ सन् 1989 में आदित्य के प्रचालन के साथ ही पूर्ण रूप से प्लाज़मा संबंधित प्रयोग किये जाने लगे।

संलयन रिएक्टर को वास्तविक बनाने के लिए विश्व की सभी प्लाज़मा विज्ञान प्रयोगशालाएँ लम्बी पल्स उत्पन्न करने की कोशिश में लगी थी, जिसके लिए अति चालक तकनीकी का इस्तेमाल किया जा रहा था। अतिचालक स्थिर अवस्था टोकामक SST-1 निर्माण के लिए निर्णय लिया गया। इसके अभिकलन और अभियांत्रिकी का कार्य भी शीघ्र ही शुरू हो गया और 1995 में यह संस्थान परमाणु उर्जा विभाग के नियंत्रण में आ गया। उसी समय स्पंदित विद्युत शक्ति, उन्नत नैदानिकी, संगणन मॉडलिंग, रेडियो आवृत्ति (आरएफ) तथा अनावेशित पुँज तापन प्रणाली आदि के विकास के लिए नये कार्यक्रम शुरू किये गए। औद्योगिक जगत में प्लाज़मा तकनीक का उपयोग करने के लिए औद्योगिक प्लाज़मा प्रौद्योगिकी सुविधा केन्द्र (एफसीआईपीटी) का गठन किया गया। प्लाज़मा भौतिकी केंद्र (सीपीपी) गुवाहाटी 2003 में आई पी आर के साथ जुड़ गया।

सन् 2005 में आईपीआर अंतर्राष्ट्रीय थर्मो न्यूक्लिअर प्रायोगिक रिएक्टर (इटर) परियोजना में भागीदार बन गया। यह सात देशों की संयुक्त परियोजना है, जिसमें चीन, यूरोपियन यूनियन, भारत, जापान, रूस, दक्षिण कोरिया और अमेरिका शामिल हैं। इटर मशीन एक अतिचालक टोकोमक है जिसका निर्माण फ्रांस के कडराच शहर में किया जा रहा है।

प्लाज़मा क्या है?

मूल तौर पर प्लाज़मा गैस/पदार्थ की एक आयनित अवस्था है। इसे पदार्थ की चतुर्थ अवस्था भी कहा जाता है जो ठोस, द्रव और गैस के बाद आती है। किन्तु वास्तव में यह पदार्थ की पहली अवस्था है। पदार्थ की दूसरी अवस्थाओं से पहले भी प्लाज़मा अस्तित्व में था। लगभग 99% ब्रह्माण्ड प्लाज़मा से बना है। दैनिक जीवन में ट्यूब लाइट (फ्लोरोसेंट बल्ब), सूर्य और अंतरिक्ष प्लाज़मा इसके उदाहरण हैं। किसी भी आयनित गैस को प्लाज़मा कहा जा सकता है पर जिस प्लाज़मा का प्रयोगशाला में अध्ययन किया जाता है उसे टोकामक ग्रेड प्लाज़मा कहा जाता है जिसके कुछ निश्चित गुण होते हैं। टोकामक ग्रेड प्लाज़मा का घनत्व कम से कम 10^{-10} ग्राम/ घन सेमी, तापमान 10 किलो इलेक्ट्रान वोल्ट होना चाहिये जहाँ पर एक इलेक्ट्रान वोल्ट का अर्थ है $11000^{\circ}\text{सेल्सियस}$ । इसके अलावा कुछ और भी चीजें हैं जो प्रयोगशाला या संलयन ग्रेड प्लाज़मा को परिभाषित करती हैं, जिनमें एक है डिबाई लम्बाई। डिबाई लम्बाई वो दूरी है जो प्लाज़मा के आयन दूसरे आयन से टकराने के पहले तय करते हैं।

सूर्य - ऊर्जा का स्रोत

सूर्य में ऊर्जा पैदा होने की प्रक्रिया के बारे में जिजासा मानव के मन में लम्बे अरसे से बनी हुई है। 19वीं सदी में यह सिद्ध हो जाने के बाद की ऊर्जा को न तो उत्पन्न किया जा सकता है और न ही नष्ट किया जा सकता है तब से यह प्रश्न वैज्ञानिकों को और भी परेशान कर रहा है। आखिर सूर्य की ऊर्जा का स्रोत क्या है?

20वीं सदी की शुरुआत में नाभिकीय भौतिकी और सापेक्षता के सिद्धान्त के विकास के साथ वैज्ञानिक यह मानने लगे की सूर्य और दूसरे तारे गरम गैस के गुब्बारे जैसे हैं जिसमें मुख्यतः हाइड्रोजन गैस भरा है। उन्होंने गरम गैसों के तापमान का पता लगाया; जो सूर्य के अंदर की ओर कार्यरत गुरुत्वाकर्षण बल को संतुलित करने के लिए जरूरी है और पाया कि यह लगभग 1.5 करोड़ डिग्री K होना चाहिये। सूर्य के केंद्र में विद्यमान दाब पर हाइड्रोजन नाभिकों में इतनी ऊर्जा होती है की वे आपस में जुड़कर हीलियम नाभिक बन जाते हैं। उस समय यह भी जानकारी प्राप्त हो चुकी थी कि हीलियम नाभिक का द्रव्यमान हाइड्रोजन के दो नाभिकों के द्रव्यमान से कम है। सापेक्षिकता सिद्धान्त के अनुसार द्रव्यमान में आयी कमी $E = mc^2$ सूत्र के अनुरूप ऊर्जा में परिवर्तित हो गयी थी। यही वह ऊर्जा का स्रोत है जो सूर्य और दूसरे तारों में भरी है।

आदित्य: भारत का पहला स्वदेशी टोकामक

आदित्य, (चित्र-1) देश का पहला टोकामक है जिसका अभिकल्पन एवं निर्माण देश में ही हुआ है। टोकामक एक टोरोइडल संरचना है जो साइकिल के ट्यूब के आकार जैसी है। आदित्य एक मध्यम माप का टोकामक है और सन् 1989 से काम कर रहा है। इसके प्लाज्मा की दीर्घ त्रिज्या 75 सेमी और लघु त्रिज्या 25 सेमी है। टोरस के चारों ओर संतुलित रूप से रखे 20 चुंबकीय टोरोइडल कुण्डलियों की सहायता से अधिकतम 1.2 टेस्ला टोरोइडल चुम्बकीय क्षेत्र उत्पन्न किया जाता है।

आदित्य टोकामक मशीन में ओमिक ट्रांसफॉर्मर प्रणाली की सहायता से विद्युत निर्वहन उत्पन्न किये जाते हैं। टोकामक मशीन ट्रांसफॉर्मर की सेकेंडरी की तरह काम करता है। इसमें सेकेंडरी एकल फेरा सिंगल टर्नर होता है तथा यह स्टेप डाउन ट्रांसफार्मर की तरह काम करता है। इस ट्रांसफार्मर की प्राइमरी एक सामान्य ट्रांसफार्मर वाइंडिंग है जो 2 किलो वोल्ट, 20 किलो एम्पीयर पर काम करती है। टोरस मशीन के अन्दर गैस भेजी जाती है, जिसमें उच्च विद्युत् क्षेत्र में निर्वहन उत्पन्न किया जाता है। टोकामक मशीन में जहाँ प्लाज्मा धारा प्रवाहित होती है उसे टोकोमक पात्र कहा जाता है। इस प्लाज्मा की एक निश्चित विद्युत् प्रतिरोध क्षमता होती है जिसका प्रतिरोधीय तापन I^2R के कारण तापमान बढ़ता है।

प्लाज्मा का एक गुण है की तापमान बढ़ने के साथ इसकी विद्युत् प्रतिरोध क्षमता घटती है। इससे प्लाज्मा की तापन दक्षता कम हो जाती है। अतः एक विशेष तापमान परास के ऊपर गरम करने के लिए अतिरिक्त तापन की आवश्यकता होती है। यह तापन, आयन साइक्लोट्रोन अनुनाद तापन (आईसीआरएच) और इलेक्ट्रान साइक्लोट्रोन अनुनाद तापन (ईसीआरएच) के द्वारा किया जाता है जिसमें इलेक्ट्रॉन या आयन टोकामक के अंदर भेजी गयी तरंग के इर्द-गिर्द अनुनाद करते हैं। एक 20-40 मेगा हर्ट्ज, 200 किलोवाट आयन साइक्लोट्रोन अनुनाद तापन (आईसीआरएच) प्रणाली को आदित्य निर्वात पात्र से जोड़कर सफलतापूर्वक प्रचालित किया जा चुका है। एक 28 गीगा हर्ट्ज, 200 किलोवाट जायरोट्रॉन आधारित इलेक्ट्रॉन अनुनाद तापन (ईसीआरएच) प्रणाली को भी आदित्य टोकामक पर सफलतापूर्वक प्रचालन किया गया है।

ईसीआरएच और आईसीआरएच दोनों प्रणालियों का उपयोग पूर्व-आयनन प्रयोगों के लिए भी किया गया है।

आदित्य नियमित रूप से ट्रान्सफॉर्मर-कनवर्टर विद्युत शक्ति प्रणाली से प्रचालित किया जा रहा है। 0.8 टेस्ला चुम्बकीय टोरोइडल क्षेत्र पर नियमित रूप से ~100 मिली सेकंड 80-100 किलो एम्पीयर प्लाज्मा उत्पन्न कर विभिन्न प्रकार के प्रयोग किए जा रहे हैं। इनमें प्लाज्मा अभिलक्षणों जैसे किनारों पर प्लाज्मा में बदलाव, प्रक्षोभ सहायक तापन का प्रभाव, भंजन एवं उसके नियंत्रण संबंधित कार्यों पर अध्ययन किए गए हैं। इन प्राचलों का मापन करने के लिए मानक नैदानिकी को इस्तेमाल किया गया है। चित्र-1 में आदित्य और इससे जुड़ी सहायक तापन प्रणालियों को दिखाया गया है।



आईपीआर में अदित्य टोकामक

आदित्य मशीन को समय के साथ प्रायोगिक आवश्यकताओं के अनुसार विभिन्न स्तर पर उन्नत किया गया है। यह देखा गया है कि प्लाज्मा के सफल भंजन एवं आरंभन में प्रथम कुछ मिलीसेकण्ड के दौरान त्रुटि चुम्बकीय क्षेत्रों की आवश्यकता पड़ती है। इसके लिए त्रिज्यीय चुम्बकीय क्षेत्र जोड़ा जाता है जिसे चार द्रुत फीडबैक कॉयल से पैदा करते हैं। टोरोइडल क्षेत्र (TR) कॉयल एवं लम्बवत क्षेत्र (BV) कॉयल के कारण उत्पन्न चुंबकीय क्षेत्रों के हाल में लिए गए मापन से भी त्रुटि क्षेत्रों की आवश्यकता का संकेत मिलता है। इस त्रुटि क्षेत्र से प्रचालन दाब परास में भी सुधार पाया गया है जिससे प्लाज्मा पैदा होने पर उच्च ऊर्जा के एक्स-रे कम पैदा होते हैं, जो लाभदायक है। प्लाज्मा विद्युत धारा से लूप विभवता एवं ऊर्ध्वाधर क्षेत्र पर पड़ने वाले असर को भी क्रियान्वित किया गया है।

स्थिर अवस्था अतिचालक टोकामक (एस एस टी - 1)

एसएसटी-1 एक स्थिर अवस्था अतिचालक टोकामक है। यह दूसरी पीढ़ी की टोकामक मशीन है। पहली पीढ़ी के टोकामक में चुम्बकीय क्षेत्र उत्पन्न करने के लिए तांबे की काँयल का उपयोग करते हैं जैसे आदित्य। पहली पीढ़ी के टोकामक में ये काँयल काफी गरम हो जाते हैं क्योंकि इसकी विद्युत प्रतिरोध क्षमता बहुत अधिक होती है एवं इसमें बहुत ज्यादा विद्युत धारा प्रवाहित होती है। इसके कारण लम्बी अवधि के लिए इनमें प्लाज्मा उत्पन्न करना संभव नहीं होता। दूसरी पीढ़ी के टोकामक में चुम्बकीय क्षेत्र उत्पन्न करने के लिए काँयलों को बनाने में अतिचालकों का उपयोग किया जाता है। अतिचालक होने के कारण इन काँयलों में ज्यादा मात्रा में विद्युत धारा प्रवाहित करके लम्बे समय तक अधिक क्षमता के चुम्बकीय क्षेत्र उत्पन्न किया जा सकता है जो संलयन रिएक्टर के लिए जरूरी है। एस एस टी -1 का उपयोग लम्बी या स्थिर अवस्था प्रचालन के अद्ययन के लिए किया जायेगा। एस एस टी -1 टोकामक में प्लाज्मा की दीर्घ और लघु त्रिज्या का अनुपात ज्यादा है जिसमें प्लाज्मा विशाल आकार का बनाया जा सकता है।



आईपीआर में एसएसटी-1 मशीन

एस एस टी-1 परियोजना का प्राथमिक लक्ष्य 1000 सेकंड अवधि के दीर्घ आकार एवं द्वी डायवर्टर वाला प्लाज्मा उत्पन्न करना है। प्लाज्मा भौतिकी को समझाने में कई समस्याएँ हैं, जिसे लम्बी अवधि के प्लाज्मा पल्स पर प्रयोग करके सुलझाया जाएगा। इनमें से कुछ समस्याएँ हैं: ऊर्जा, कण एवं अशुद्ध परिसीमन पर प्लाज्मा में उपस्थित अन्य तत्वों एवं किनारों के मोड़ पर प्रभाव, ऊर्जा पर स्थिरता सीमा एवं उसकी विद्युत धारा प्रवाह पद्धतियों पर निर्भरता, RF क्षेत्रों की उपस्थिति में विद्युत प्रतिरोध क्षमता में बदलाव, अवरोधों एवं ऊर्ध्वाधर विस्थापन घटनाएँ (VDE) तथा तापीय अस्थिरता। स्थिर अवस्था प्रचालन में अप्रेरक विद्युत (नॉन-इंडक्टिव) धारा प्रणाली,

प्लाज्मा को बनाए रखती है। एस एस टी-1 में विद्युत विभिन्न धारा पद्धतियों एवं उनके संयोजनों, धारा प्रवाह दक्षता, प्रोफाइल नियंत्रण एवं बूट स्ट्रैप धारा जैसे विभिन्न पहलुओं का अध्ययन किया जाएगा। स्थिर अवस्था प्रचालनों के लिए दीर्घीकृत प्लाज्मा में एक प्रभावशाली डायर्वर्टर आवश्यक है। डायर्वर्टर प्रचालन के विभिन्न पहलुओं जैसे स्थिर अवस्था प्रचालन में ताप एवं कणों का निष्कासन, घिसाव एवं कणों का पुनःचक्रण, विकिरणी डायर्वर्टरों एवं पंपित डायर्वर्टरों का अध्ययन किया जाएगा।

संलयन अनुसंधान में प्रगत टोकामक पर अध्ययन बहुत जरूरी है। इनमें प्लाज्मा उच्च B_N एवं उच्च बूटस्ट्रैप विद्युत धारा वहन करता है जो सामान्यतः उच्च त्रिभुजिकता दीर्घता तथा अधिक ऋणात्मक विद्युत प्रतिरोधक प्लाज्मा के उच्च (H - मोड) तथा अति उच्च (VH - मोड) परिसीमन मोड पर बनता है, हालांकि एसएसटी-1 प्रगत टोकामक व्यवस्थाओं के लिए अनुकूल नहीं है, मशीन की सीमाओं को ध्यान में रखकर इस दिशा में कुछ प्रयोग किये जाएंगे।

एसएसटी-1 के प्राचलों का चयन तकनीकी एवं भौतिकी लक्ष्यों पर आधारित है। अतिचालक चुम्बकों के लिए NbTi अतिचालक (सुपरकंडक्टर) का प्रयोग किया जाता है जिसे 4.5°K तापमान तक ठंडा करते हैं। चुम्बक के निकट अधिकतम चुम्बकीय क्षेत्र का मान 5.1T होता है। अतिचालक काँयलों का प्रयोग करते कम अभिमुखता अनुपात मशीन का अभिकल्पन मुश्किल है क्योंकि इसमें जगह की कमी होती है। इसके अलावा अधिक अभिमुखता अनुपात मशीन के और भी लाभ हैं जैसे उच्च बूटस्ट्रैप धारा, बेहतर परिसीमन आदि। इसलिए एस एस टी-1 में अधिक अभिमुखता अनुपात (~ 5) का फैसला लिया गया है। अन्य टोकामकों में उच्च त्रिभुजाकारिता ($\delta \sim 0.4-0.8$) के साथ परिसीमन (VH मोड) एवं B_N में पर्याप्त सुधार पाया गया है। दीर्घीकरण से प्लाज्मा की विद्युत धारा वहन क्षमता में सुधार आता है। दीर्घीकरण का मान $K \sim 1.6-2.0$ के बीच होने पर B_N में सुधार पाया गया है। अतः एसएसटी-1 के लिए k एवं δ का मान इन्हीं के समान चुना गया हैं। द्वी डायर्वर होने के कारण अधिक संख्या में विपथक प्लेट ताप के वितरण के लिए रखे जा सकते हैं। इस प्रकार प्रति प्लेट ताप भार कम होता है। इसलिए द्वी डायर्वर विन्यास का चयन किया है, इस प्रावधान के साथ की भविष्य में एकल शून्य प्रचालन कर सकें।

मशीन की बड़ी त्रिज्या 1.1 मीटर (टोरस की त्रिज्या) तथा छोटी त्रिज्या 0.2 मीटर (प्लाज्मा की त्रिज्या) है। प्लाज्मा केंद्र में टोरोइडल चुम्बकीय क्षेत्र का मान 3 टेस्ला है और प्लाज्मा विद्युत धारा 220 KA की है। प्लाज्मा की दीर्घता 1.7 से 1.9 के बीच है तथा त्रिभुजिकता 0.4 से 0.7 के बीच है। इसमें हाईड्रोजन गैस का प्रयोग किया जाएगा एवं प्लाज्मा उत्पन्न होने के बाद वह 1000 सेकंड तक बनी रहेगी।

सहायक विद्युत शक्ति मुख्य रूप से 3.7 GHz पर 1.0 मेगावाट क्षमता के निम्न संकर धारा प्रवाह (एलएचसीडी) पर आधारित होगी। सहायक तापन प्रणालियों में 22MHz से 91MHz पर 1 मेगावाट क्षमता के आयन साइक्लोट्रॉन अनुनाद तापन (आइसीआरएच), 84 GHz पर 0.2 मेगावाट क्षमता के इलेक्ट्रॉन साइक्लोट्रॉन अनुनाद तापन (ईसीआरएच) एवं 0.8 मेगावाट (80

KeV पर) शीर्ष शक्ति के अनावेशित कण पुँज प्रणाली है, जिसमें कणों की ऊर्जा 10-80 KeV तक हो सकती है।

एसएसटी-1 टोकामक में अतिचालक कॉयल को टोरोइडल (टीएफ) एवं पोलोइडल दोनों चुम्बकीय क्षेत्रों (PF) के लिए लगाया जा चुका है। TF कॉयलों के बीच सुराखों में एक अति उच्च निर्वात (UHV) संगत पात्र रखा गया है जिसमें प्लाज्मा का सामना करने योग्य घटक (PFC) है। एक उच्च निर्वात क्रायोस्टैट सभी अतिचालक कॉयलों एवं निर्वात पात्र को धेरने के लिए रखा गया है। SC कॉयलों पर विकिरण ताप कम करने के लिए निर्वात पात्र एवं अतिचालक कॉयलों के बीच तथा क्रायोस्टैट एवं अतिचालक कॉयलों के बीच द्रव नाइट्रोजन (LN_2) शीतलित तापीय शील्ड रखा जाता है। सामान्य कंडक्टर ओमिक ट्रांसफॉर्मर प्रणाली को प्लाज्मा को शुरू करने एवं प्रारंभिक समय में उसमें विद्युत धारा बनाए रखने के लिए उपयोग किया जाता है। ऊर्ध्वाधर क्षेत्र कॉयल का एक जोड़ा प्लाज्मा के आरंभिक चरण में प्लाज्मा को गोलाकार रूप में संतुलन प्रदान करता है। निर्वात पात्र के अंदर रखी सैडल कॉयलों का एक समूह प्लाज्मा का नियंत्रण ऊर्ध्वाधर दिशा में तीव्रता से करता है जबकि (PF) पोलोइडल कॉयल प्लाज्मा के आकार का नियंत्रण करता है। अन्य उपप्रणालियों में द्रवहीलियम (LHe) एवं द्रव नाइट्रोजन LN_2 तापमानों पर क्रायोजेनिक प्रणालियाँ, विभिन्न कारणों से ताप निष्कासन के लिए शीतलित जल प्रणाली शामिल हैं। प्लाज्मा एवं मशीन की मॉनिटरिंग के लिए कई नैदानिकी तैनात किए गये हैं, साथ ही वितरीत आंकड़ा प्राप्त एवं नियंत्रण प्रणाली भी लगायी गयी हैं।

एसएसटी-1 का नवीनीकरण सन् 2010 में शुरू हुआ था जिसका प्रचालन अब शुरू हो चुका है। पहला प्लाज्मा निवर्हन 20 जून 2013 को सफलता पूर्वक प्राप्त किया जा चुका है। इस उपलब्धि के साथ ही भारत उन अभिजात देशों (रूस, फ्रांस, जापान, दक्षिणकोरिया और चीन) में शामिल हो गया है, जिनके पास अतिचालक टोकामक है, जो स्थिर अवस्था प्लाज्मा पैदा करने में सक्षम हैं। दूसरी उप प्रणालियों और प्रगत नैदानिकी प्रणालियों को मशीन के साथ जोड़ना तथा प्राथमिक दीवार के घटकों को लगाने की योजना पर पूरे जोरों से काम चल रहा है।

मौलिक प्लाज्मा भौतिकी प्रयोग

आईपीआर में प्लाज्मा भौतिकी पर कई मौलिक प्रयोग प्रचालित हो रहे हैं। कुछ प्रमुख प्रयोग हैं- बृहद आयतन प्लाज्मा उपकरण (एलपीडी), मुक्त इलेक्ट्रॉन लेसर (एफईएल), नॉन-न्युट्रल टोरोइडी प्लाज्मा, डस्टी प्लाज्मा, प्लाज्मा नाइट्राइडिंग, प्लाज्मा में डूबी (इमर्स्ट) आयन अंतर्रैपण, एनोड आर्क अध्ययन, रेडियो आवृत्ति प्रयोग आदि।

एलवीपीडी प्रयोगों में व्हिस्कर तरंगों के उत्तेजन एवं संचरण पर विस्तृत अध्ययन किए जा रहे हैं। एफईएल प्रयोग में प्रकाश वेग से गतिमान परत इलेक्ट्रॉन पुँज को पचास हर्टज विद्युतचुम्बक विग्लर के माध्यम से संचरित किया गया है एवं सूक्ष्मतरंग आवृत्ति का विकिरण देखा गया है। नॉन-न्युट्रल प्लाज्मा प्रयोग में टोरोइडल चुम्बकीय क्षेत्र में डाइकोट्रॉन अस्थिरता एवं

इलेक्ट्रॉन समूह के व्यवहार का अध्ययन किया गया है। धूलीय (डस्ट) ध्वनिक तरंगों का उत्तेजन, कूलॉम क्रिस्टल के गठन आदि का अध्ययन धूलीय प्लाज़मा प्रयोगों में किया गया है। प्लाज़मा-सतह अंतःक्रिया भौतिकी का अध्ययन प्लाज़मा नाइट्राइडिंग प्रयोगों में एवं तरंग-कण अंतःक्रिया का अध्ययन RF प्रयोगों में किया गया है।

औद्योगिक प्लाज़मा प्रोद्योगिकी सुविधा केन्द्र (एफसीआईपीटी)

संलयन रिएक्टर के अलावा भी प्लाज़मा की दूसरी अनेक उपयोगिताएँ हैं, जो उद्योगों के काम आती हैं। प्लाज़मा की इन उपयोगिताओं को काम में लाने के लिए आईपीआर के अंतर्गत एफसीआईपीटी का गठन किया गया है। प्लाज़मा तकनीकों का मुख्य उपयोग पदार्थ का संशोधन और पर्यावरण को सुधारना है। एफसीआईपीटी की स्थापना सन् 1997 में प्लाज़मा तकनीकियों के वाणिज्यिक उपयोगों को बढ़ावा देने के लिए की गई। इस केंद्र में प्रक्रमण विकास एवं उपकरण प्रयोगशालाएं, जॉब शॉप, पदार्थ विशेषीकरण प्रयोगशाला एवं निर्माण सुविधाएं हैं। यहाँ उन्नत प्लाज़मा पद्धतियों के विकास को साकार करने के लिए मानक प्रयोग, उसके विस्तार एवं पायलट संयंत्रों को स्थापित किया जाता है। एक नये विचार को शीघ्रता से साकार करने के लिए संकल्पना से लेकर उसके उत्पादन तक विकसित करने के लिए कई प्रोटोटाइप उपकरण उपलब्ध हैं। प्लाज़मा आधारित तकनीकियों की औद्योगिक स्वीकृति को बढ़ावा देने और उद्यमियों के लिए संबंधित तकनीकी-वाणिज्यिक आंकड़ा निर्माण करने के लिए कार्यशाला में नई तकनीकी का ऊष्मायन एवं प्रदर्शन किया जाता है। यह कार्यशाला औद्योगिक पैमाने पर सतह एवं पदार्थ उपचार का काम करती है। यहाँ उन्नत उपकरणों से युक्त पदार्थ विशेषीकरण प्रयोगशाला उद्योग, अनुसंधान संस्थानों एवं विश्वविद्यालयों में कार्यरत शोधकर्ताओं के लिए उपलब्ध है। एक और महत्वपूर्ण गतिविधि उन्नत प्लाज़मा उपकरणों का निर्माण करना है जो तकनीकी के सफल वाणिज्यिक हस्तांतरण के लिए जरूरी है।

प्लाज्मा के सामाजिक उपयोग : आईपीआर का योगदान

एफसीआईपीटी, आईपीआर में प्लाज्मा के सामाजिक उपयोग

भारत में गांधीनगर में स्थित औद्योगिक प्लाज्मा प्रौद्योगिकी सुविधा केन्द्र (एफसीआईपीटी), प्लाज्मा अनुसंधान संस्थान (आईपीआर) एवं उद्योगों के बीच कड़ी का कार्य करता है। इस केन्द्र में प्लाज्मा विज्ञान एवं संबंधित तकनीकियों की जानकारी को सामग्री प्रसंस्करण एवं पर्यावरण की रक्षा के लिए उन्नत एवं गैर-परंपरागत प्लाज्मा आधारित तकनीकियों के निर्माण में निर्माण के लिए उपयोग में लाया जाता है।

प्लाज्मा अनुसंधान संस्थान, परमाणु ऊर्जा विभाग (पऊवि), भारत सरकार के अंतर्गत एक स्वायत्तशासी संस्थान है। यह विशेष रूप से प्लाज्मा विज्ञान एवं तकनीकी अनुप्रयोगों के विकास में आधारभूत अनुसंधान के लिए समर्पित है। यहाँ चुंबकीय बंधित संलयन एवं प्लाज्मा सहायक सामग्री प्रसंस्करण पर विशेष महत्व दिया जाता है।

एफसीआईपीटी प्लाज्मा द्वारा होने वाली प्रक्रियाओं से संकल्पना को आरंभ करते हुए उसकी विशिष्ट तकनीकियों का विकास कर उसका व्यवसायीकरण भी करता है और साथ ही विकसित तकनीकी को उद्योगों को हस्तांतरण कर, तथा उसकी प्रत्यक्ष मार्केटिंग करने के साथ पत्रिका को प्रकाशित करके तकनीकी के प्रति जागरूकता को बढ़ावा देता है।

सन् 1997 में एफसीआईपीटी की स्थापना की गई थी। इसका मुख्य उद्देश्य तकनीकी का विकास, ऊर्जायन, प्रदर्शन, उत्पादन एवं उद्योगों को हस्तांतरण के माध्यम से प्लाज्मा तकनीकियों के व्यावसायिक उपयोग को बढ़ावा देना है। इस केन्द्र में प्रक्रमण विकास एवं उपकरण प्रयोगशालाएँ, जॉब शॉप, सामग्री अभिलक्षण एवं निर्माण सुविधाएँ हैं।

एफसीआईपीटी के पास विविध विषयों में विशेषज्ञता प्राप्त वैज्ञानिकों एवं इंजीनियरों की टीम है, जो प्लाज्मा भौतिकी, प्लाज्मा रसायन, धातुविज्ञान, पदार्थ विज्ञान, पावर इलैक्ट्रॉनिक्स एवं इन्स्ट्रूमेंटेशन में विशेषज्ञ हैं।

एक ही छत के नीचे उपरोक्त सभी गतिविधियाँ उद्योगों को औद्योगिक तकनीकियों का एक संपूर्ण पैकेज प्रदान करने एवं स्वेदशी तकनीकों को अपनाने में रुचि रखनेवाले की सुविधा सेवाओं को पूरा करने का प्रयास केन्द्र के लिए एक उपयुक्त वातावरण निर्मित करता है।

यहाँ होनेवाले प्रमुख प्रयोग निम्न प्रकार हैं:

1) सतह इंजीनियरिंग के उपयोग

A. सब्स्ट्रेट पर ग्लो डिस्चार्ज प्लाज्मा नाइट्रोजिङ से होनेवाला परिवर्तन

प्लाज्मा नाइट्रोजिङ एक प्लाज्मा सक्रिय ताप रसायन प्रसार प्रक्रिया है, जिसमें स्टील की सतह पर 400°C से 550°C के तापमान रेज में नाइट्रोजन प्रयुक्त किया जाता है। नाइट्रोजन के आयन,

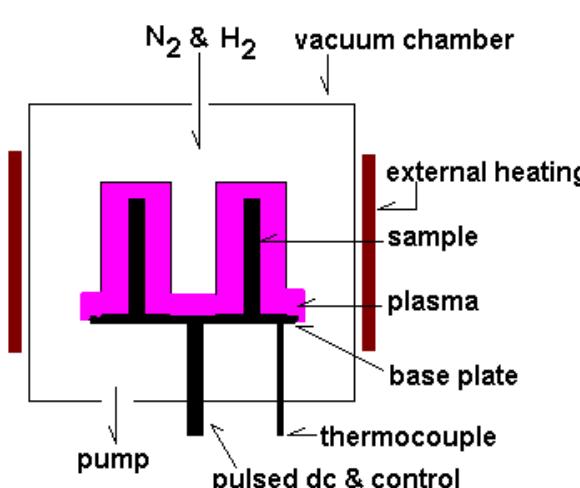
स्टील में निहित आयरन एवं मिश्रधातु तत्वों के साथ मिश्रित हो जाते हैं, जिससे नाइट्राइड्स का गठन होता है। इससे सतह की कठोरता बढ़ जाती है और घर्षण एवं जंग प्रतिरोध में सुधार होता है।

प्लाज्मा नाइट्राइडिंग के लाभ

कोई विकृति नहीं होती।
 आधार की कठोरता बनाए रखता है।
 प्रभावी आवरण
 उच्च पुनरावर्तनीयता
 सफेद परत का नियंत्रण
 पर्यावरण के अनुकूल
 स्टेनलेस स्टील्स को और मज़बूत बनाता है
 प्रक्रिया के बाद दुबारा ग्राइंडिंग आपरेशन की आवश्यकता नहीं
 घटक की आयु में बढ़ोतरी
 संयंत्र को चालू/बंद करने में कम समय लगता है
 क्रिया चक्र का समय कम करता है

उपयोग

कपड़ा उद्योग
 ऑटोमोबाइल क्षेत्र
 प्लास्टिक उद्योग
 उपकरण एवं डाई उद्योग
 पनबिजली के घटक



(a)

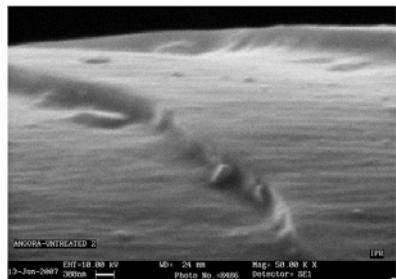


(b)

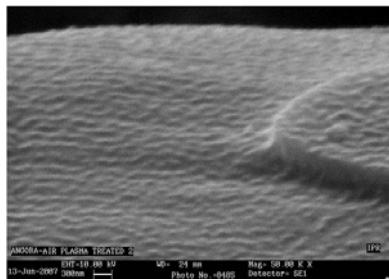
चित्र 1:(a) प्लाज्मा नाइट्राइडिंग हेतु प्रयोगात्मक व्यवस्था (b) नाइट्राइडिंग के दौरान प्लाज्मा ग्लो

B. ऊन एवं अन्य वस्त्रों की सतह का प्लाज्मा नक्काशी द्वारा सक्रियण

अंगोरा खरगोश के बाल से प्राप्त किए अंगोरा फाइबर को वायुमण्डलीय प्लाज्मा पर संसाधित किया जाता है, ताकि घर्षण दर में सुधार एवं फाइबरों को एकजुट किया जा सके। भैड़ के ऊन की तुलना में अंगोरा फाइबर आठ गुना गर्म है और कम वजन का है। कच्चे अंगोरा फाइबर की सतह फिसलन भरी होने के कारण कताई में कठिनाई होती है। लेकिन प्लाज्मा उपचार ने इसे संभव बना दिया है।



बिना उपचार किये अंगोरा
फाइबर की SEM छवि



प्लाज्मा उपचारित अंगोरा
फाइबर की SEM छवि



प्लाज्मा उपचारित अंगोरा
फाइबर

C. प्लाज्मा आधारित लेपन

पतली फिल्म लेपन के कई उपयोग हैं- जैसे ठोस लेपन, परावर्तकविरोधी लेपन, सौर लेपन आदि। पतली फिल्म जमाव के लिए मैग्नेट्रॉन स्पटरिंग, पीईसीवीडी जैसी प्लाज्मा आधारित तकनीकियों का व्यापक रूप से उपयोग किया जाता है।

लाभ

- ✓ प्लाज्मा आधारित लेपन बहुत घने हैं।
- ✓ कम माइक्रोस्कोपिक दोष हैं।
- ✓ अच्छा आसंजन प्रदान करता है।
- ✓ पर्यावरण के अनुकूल तकनीक।
- ✓ किसी भी धातु, मिश्रधातु या यौगिक पर आसानी से स्पटरिंग।
- ✓ ऊष्मासंवेदी सब्स्ट्रेट पर लेप करने में सक्षम।



एफसीआईपीटी में मैग्नेट्रॉन स्परिंग प्रणाली



प्लाज्मा एलुमिनाइजिंग प्रणाली



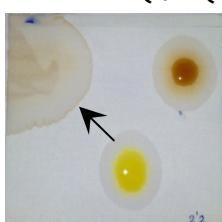
सौर कोशिका को विकसित करने के लिए मल्टी मैग्नेट्रॉन स्परिंग प्रणाली



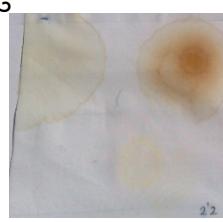
विभिन्न प्रकार की सतहों पर लेपन

D. प्लाज्मा तकनीक द्वारा नैनोसामग्री का उत्पादन

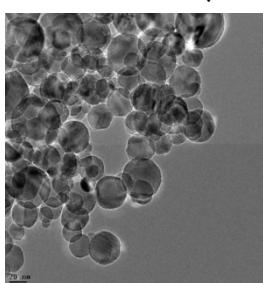
विभिन्न क्षेत्रों - इलैक्ट्रॉनिकी से लेकर जैवचिकित्सा प्रणालियों में नैनो सामग्रियों एवं नैनोतकनीकी का व्यापक रूप से उपयोग होता है। नैनोआकार के टाइटेनियम डाइऑक्साइड कणों का इस्तेमाल पेट, कपड़ों (स्वयं शोधन) एवं सौंदर्य प्रसाधनों में किया जाता है। एक ही चरण में आसानी से विभिन्न नैनोसामग्रियों का उत्पादन करने के लिए तापीय प्लाज्मा आधारित प्रणाली का परिचालन किया गया है। यहाँ कुछ उपयोगों का वर्णन किया गया है।



बिना लेपित कपड़ा



TiO₂ से लेपित कपड़ा



TiO₂ नैनोकण

नैनोसामग्री उत्पादन प्रणाली

- बृहद क्षेत्र में नैनोस्तर पैटर्न तकनीकियों में नैनोकणों का श्रृंखला समूह बनाया जाता है, जिसका विभिन्न उपयोग, जैसे सौर कोशिका की दक्षता को बढ़ाना और अन्य क्षेत्रों में किया जाता है।
- बहुत ही कम घनत्व वाले अणु का पता लगाने के लिए सेंसर का विकास।
- प्रकाश संचरण के लिए नैनोस्केलप्लास्मोनिक वेवगाइड।
- पानी के शुद्धिकरण के लिए फिल्टरों में जीवाणुरोधी गुण तकनीक का इस्तेमाल।

E. प्लाज्मा पाइरोलिसिस

- ✓ पर्यावरण में जैविक कचरे का ऊष्मीय विघटन ऑक्सीजन के अभाव में या नियंत्रित ऑक्सीजन की स्थिति में किया जाता है।
- ✓ प्लाज्मा आर्क एक तप्त स्रोत के रूप में काम करता है, जिसका तापमान 10000°C से अधिक होता है।
- ✓ US-EPA और CPCB द्वारा दी गई सीमा के भीतर उत्सर्जन होता है।
- ✓ प्राथमिक रिएक्टर में गठित गैसों का उच्च तापमान पर उपयोग किया जाता है तथा ये उच्च कैलोरिफिक मान प्राप्त करते हैं।
- ✓ ताप विनियमकों द्वारा और उत्पन्न गैसों के दहन द्वारा ऊर्जा को पुनःप्राप्त किया जा सकता है।



प्लाज्मा पाइरोलिसिस व्यवस्था

F. इंजीनियरी क्षेत्र में प्लाज्मा के उपयोग

- 1) वायुमण्डलीय प्लाज्मा जेट
 - ✓ दुर्घटनाओं के समय खून के स्राव को रोकने के लिए प्लाज्मा जेट को विकसित किया गया है।
 - ✓ घावों के किटाणुशोधन के लिए भी प्लाज्मा जेट का उपयोग किया जाता है।

2) कृषि क्षेत्र में प्लाज्मा

- ✓ बीज के सख्त आवरण से अंकुरण देरी से होता है, कभी-कभार अंकुरण होता ही नहीं।
- ✓ परंपरागत पद्धतियों जैसे गरम पानी, सल्फरिक एसिड का उपयोग और प्राइमिंग में काफी समय लगता है और ये पद्धतियाँ पर्यावरण के लिए हितकारी नहीं हैं।
- ✓ प्लाज्मा प्रक्रिया भौतिक-रसायनिक प्रक्रिया है जिससे बीज का अंकुरण आसानी से होता है।

3) प्लाज्मा के उभरते उपयोग

- ✓ शिमला मिर्च, भिंडी आदि सब्जियों से कीटनाशकों को दूर करने में प्लाज्मा उपयोग किया

जा सकता है।

- ✓ प्लाज्मा के उपयोग से सर्जरी के औजारों को जीवाणुरहित बनाया जा सकता है।



खून के जमाव के लिए प्लाज्मा शिमला मिर्च के बीजों के उपचार प्लाज्मा प्रक्रिया से
टॉर्च के लिए ग्लो डिस्चार्ज प्लाज्मा उपचारित एवं अनुपचारित
प्रणाली शिमला मिर्च का बीज

परमाणु विखंडन से ऊर्जा

विनय बी कांबले
प्लाज्मा अनुसंधान संस्थान
गांधीनगर 382428, गुजरात
ईमेल: vinaybkamble@gmail.com

परमाणुओं से छेड़छाड़

कोयले को भट्टी में जलाने से ऊर्जा कैसे मिलती है? जब हम कोयले को जलाते हैं, तब हम कार्बन एवं ऑक्सीजन के परमाणुओं के साथ छेड़छाड़ करके उनके बाहरी इलेक्ट्रॉन्स को पुनर्व्यवस्थित करके ज्यादा स्थिर स्थिति में लाते हैं। जब हम नाभिकीय संयंत्र में युरेनियम का उपयोग करके ऊर्जा उत्पन्न करते हैं, तब हम युरेनियम के नाभिक में छेड़छाड़ करके उसके न्यूक्लिअन (प्रोटॉन्स एवं न्यूट्रॉन्स) को पुनर्व्यवस्थित करके ज्यादा स्थिर स्थिति में लाते हैं। यहाँ न्यूक्लिओन का अर्थ प्रोटॉन अथवा न्यूट्रॉन है, जो कि नाभिक के घटक है।

हम जानते हैं कि इलेक्ट्रॉन्स परमाणु के साथ कुलंब बल से जुड़े हुए रहते हैं। बाहरी तत्व से इलेक्ट्रॉन को दूर करने के लिए कुछ इलेक्ट्रॉन वोल्ट्स ऊर्जा चाहिए। ev ऊर्जा की इकाई है, जो इलैक्ट्रॉन को 1 वोल्ट विभव अंतर द्वारा त्वरित किये जाने के लिये जरूरी है। न्यूक्लिअन्स, नाभिक के साथ मजबूत न्यूक्लिअर बल से बंधे हुए होते हैं और उसमें से एक को बाहर खिंचने के लिए कई लाख ev(Mev) ऊर्जा चाहिए। अतः हम एक किलोग्राम युरेनियम से 1 किलोग्राम कोयले के मुकाबले लाखों गुना ऊर्जा निकाल सकते हैं। उदाहरण के लिए, जब एक कार्बन परमाणु के दो ऑक्सीजन परमाणु के साथ जुड़ने पर एक्सोथर्मिक रसायन प्रक्रिया द्वारा सिर्फ 4ev की ऊर्जा उत्पन्न होती है (चित्र - 1)। इसके विपरीत जब एक युरेनियम नाभिक $^{235}\text{U}_{92}$ (जिसमें 92 प्रोटोन और 143 न्यूट्रॉन्स होते हैं) को विखंडन प्रक्रिया से तोड़ने पर 200 MeV जितनी ऊर्जा उत्पन्न होती है।



परमाणु और नाभिकीय दोनों ही मामले में उत्पन्न हुई ऊर्जा के साथ-साथ ईधन की शेष ऊर्जा में भी कमी होती है। युरेनियम की खपत और कोयला जलाने में केवल एकमात्र अंतर यह है

कि युरेनियम के मामले में कोयले की तुलना से बहुत ज्यादा मात्रा में उपलब्ध शेष ऊर्जा का अन्य ऊर्जा में रूपांतरण होता है - वास्तव में लाख गुना ज्यादा! कोष्ठक - 1 दर्शाता है कि 1 किग्रा पदार्थ से विभिन्न प्रक्रियाओं द्वारा कितनी ऊर्जा प्राप्त हो सकती है और यह प्राप्त की हुई ऊर्जा एक 100 वॉट के लाईट बल्ब को कितनी देर तक प्रकाशित कर सकती है। अंतिम पंक्ति दर्शाती है कि पदार्थ और प्रतिपदार्थ की पूर्ण आपसी विनाशप्रक्रिया ही ऊर्जा प्राप्त करने की सर्वोच्च प्रक्रिया है। हालांकि किसी ने भी अभी तक 1 किग्रा प्रतिपदार्थ को किफायती तरीके से उत्पादित करने का पता नहीं लगाया है, जिसका ऊर्जा उत्पादन प्रक्रिया में उपयोग कर सकें।

तालिका-1 : 1 कि.ग्रा पदार्थ से प्राप्त ऊर्जा

पदार्थ का स्वरूप	प्रक्रिया	एक 100 W प्रकाश बल्ब कितनी देर तक चलेगा
पानी	50 m ऊंचा झरना	5 सेकण्ड
कोयला	जलाना	8 घंटे
समृद्ध UO_2 (3%)	नाभिकीय संयन्त्र में विखंडन	680 वर्ष
^{235}U	पूर्ण विखंडन	3×10^4 वर्ष
तापीय इयुटेरियम गैस	पूर्ण विखंडन	3×10^4 वर्ष
पदार्थ और प्रतिपदार्थ	पूर्ण विनाश	3×10^7 वर्ष

परमाणु विखंडन: बुनियादी प्रक्रिया

प्रोटॉन की खोज 1919 में अर्नेस्ट रधरफोर्ड ने की थी, जबकि न्यूट्रॉन की खोज एक अंग्रेजी भौतिक विज्ञानी जेम्स चेडविक ने 1932 में की थी। कुछ साल बाद एनरीको फर्मी और उनके सहयोगियों ने रोम में यह खोज की, कि यदि अलग-अलग तत्वों पर न्यूट्रॉन्स की बौछार की जाए तो नये रेडियोधर्मी तत्वों को बनाया जा सकता है। फर्मी की धारणानुसार प्रोटॉन या अल्फा कण की तुलना में विद्युतभारीत न होने के कारण न्यूट्रॉन एक उपयोगी प्रक्षेप्य बन सकता है, क्योंकि नाभिकीय सतह तक पहुंचने में उसे विद्युत प्रतिरक्षण की अनुभूति नहीं होती। न्यूट्रॉन के लिए कुलम्ब अवरोध न होने के कारण इस धीमी गति का न्यूट्रॉन भी अत्यंत बड़ी और अत्यधिक भारीत नाभिक में भी घूसकर परस्पर प्रभाव डाल सकता है। यह पता चला है कि तापीय न्यूट्रॉन्स सबसे उपयुक्त और असरकारक होते हैं जो 0.04eV की मध्य गतिज ऊर्जा के साथ कमरे के तापमान में पदार्थ के साथ संतुलन में होते हैं।

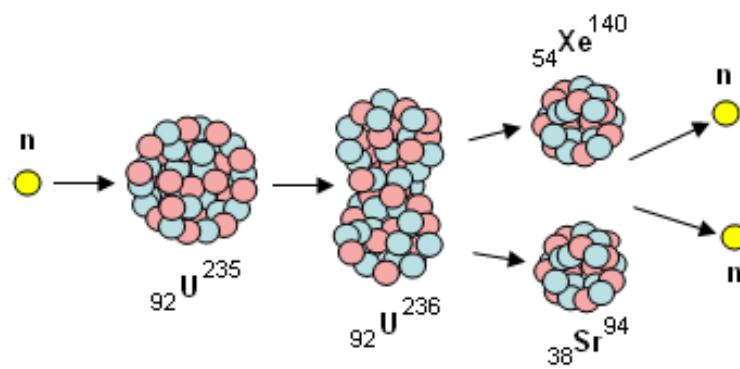
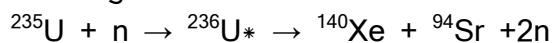
ओटोहान और फ्रीट्स स्ट्रासमेन ने 1939 में युरेनियम पर तापीय न्यूट्रॉन्स की बौछार की। बौछार के पश्चात् उन्हें पता चला की कई नये रेडियोधर्मी तत्वों का निर्माण हुआ। उनमें से एक था बेरियम जो $Z=56$ परमाणु क्रमांक वाला मध्यम भारीत तत्व है। यहां इस बात पर ध्यान दे की Z नाभिक में प्रोटॉन्स की संख्या सूचित करता है। युरेनियम ($Z=92$) पर न्यूट्रॉन्स की बौछार करने से ये मध्यम भारित तत्व का निर्माण कैसे होता है? जल्द ही इस पहेली का हल लिज मेटनर और उनके भतीजे ओटो फ्रीश ने ढूँढ निकाला। उन्होंने बताया की एक न्यूट्रॉन को शोषित करने पर

युरेनियम नाभिक ऊर्जा छोड़ने के साथ लगभग दो समान हिस्से में विभाजित हो जाता है, जिसमें से एक बेरियम हो सकता है। उन्होंने इस प्रक्रिया का नाम नाभिकीय विखंडन रखा। तापीय न्यूट्रॉन से ^{235}U के विखंडन को इस तरह दर्शाया जा सकता है।



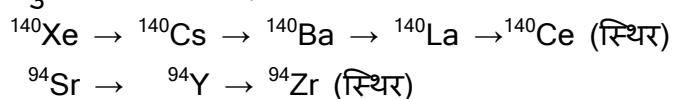
जहाँ $^{236}\text{U}_*$ एक यौगिक नाभिक सूचित करता है। X और Y मध्यम भारीत विखंडित टुकड़े हैं, जो कि अत्यंत रेडियोधर्मी होते हैं। इस तरह की विखंडन प्रक्रिया में घटक 'b' का औसत मूल्य 2.47 होता है जो इस प्रक्रिया से मुक्त हुए न्यूट्रॉन्स की संख्या दर्शाता है। हालांकि केवल 0.01% घटनाओं में X और Y टुकड़ों का भार समान होता है। हमें यह भी ध्यान देना चाहिए जो लगभग 7% घटनाओं में पायी जाने वाली भार संख्या A=140 और A=95 है (यहाँ भार संख्या A नाभिक में रहे प्रोटॉन्स और न्यूट्रॉन्स की कुल संख्या दर्शाती है।)

विखंडित टुकड़े X और Y को प्राथमिक टुकड़े कहा जाता है और वे बहुत ही ज्यादा न्यूट्रॉन से भरपूर होने के कारण अस्थिर होते हैं। वे क्रमिक बीटा क्षय की श्रृंखला से स्थिरता प्राप्त करते हैं। एक विशिष्ट उदाहरण के अनुसार:



Neutron bombardment of uranium-235 resulting in one possible fission

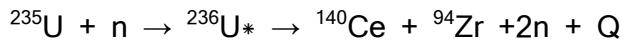
विखंडित टुकड़े ^{140}Xe और ^{94}Sr का क्षय बीटा क्षय प्रक्रिया (इलैक्ट्रॉन उत्जर्सन) द्वारा स्थिर तत्व नीचे दिये अनुसार आगे बढ़ता है -



यह ^{235}U के विखंडन का केवल एक उदाहरण है (चित्र 2)। ये हमेशा Xe और Sr में ही विभाजित नहीं होते परंतु आमतौर पर लगभग दो समान भारीत टुकड़ों में बंट जाता है। अक्सर अंत में बेरियम और क्रिप्टोन मिलते हैं। उत्सर्जित न्यूट्रॉन की संख्या हमेशा अचल नहीं होती बल्कि वह एक से कई के बीच में वितरीत होती है। उत्सर्जित ऊर्जा भी हमेशा अचल नहीं होती बल्कि वह 200 MeV के नजदीक होती है। परंतु रासायनिक प्रतिक्रिया की तुलना में ^{235}U की नाभिक के विखंडन से कैसे इतनी ज्यादा मात्रा में ऊर्जा - लाखों गुना ज्यादा मिलती है?

विखंडन प्रतिक्रिया में उत्पादित ऊर्जा

जिस प्रक्रिया की हमने ऊपर चर्चा की है उसमें ऊर्जा कितनी उत्पन्न होती है? इस प्रभावी प्रतिक्रिया को हम इस तरह लिख सकते हैं-



यहाँ Q पूर्ण विघटित ऊर्जा उत्पादन है।

चलो देखते हैं कि हमने कहां से शुरू किया और प्रतिक्रिया के अंत में हमें क्या मिला। अगर हम उपरोक्त प्रतिक्रिया में मिले विखंडित टुकड़ों की जगह उनके स्थित अंतिम उत्पाद रखें तो ^{235}U का संपूर्ण रूपांतरण यह हो सकता है-



यहाँ केवल एक न्यूट्रॉन इसलिए है क्योंकि बायें तरफ का एक न्यूट्रॉन दायें तरफ के दो में से एक न्यूट्रॉन को रद्द करता है। अब ^{235}U और उसके विखंडित उत्पादों के परमाणु द्रव्यमान इस तरह है:

$$^{235}\text{U} \text{ mass} = 235.043924 \text{ u},$$

$$^{140}\text{Ce} \text{ mass} = 139.905433 \text{ u}$$

$$^{94}\text{Zr} \text{ mass} = 93.906315 \text{ u},$$

$$\text{n mass} = 1.008665 \text{ u}$$

यहाँ u परमाणु द्रव्यमान इकाई 1 u = 1.66054×10^{-27} kg दर्शाता है।

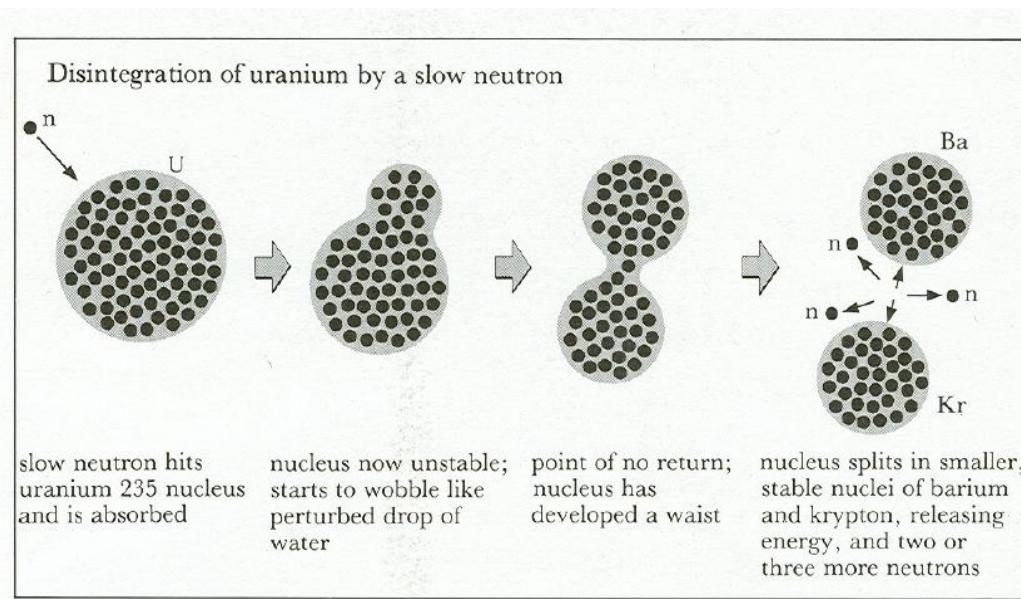
अगर हम विखंडित टुकड़ों के द्रव्यमानों का जोड़ करें तो हमें विखंडित टुकड़ों का कुल द्रव्यमान 234.820413 u मिलेगा। इस तरह द्रव्यमान में प्रतिक्रिया की वजह से $\Delta m = 235.043924 \text{ u} - 234.820413 \text{ u} = 0.223511 \text{ u}$ जितना अंतर आता है।

प्रत्यक्ष स्पष्ट रूप से $\Delta m = 0.223511 \text{ u}$ के जितना द्रव्यमान गायब हो गया! कहाँ गया? आइंस्टाइन ने द्रव्यमान-ऊर्जा समानक संबंध $E = mc^2$, (जहाँ c का मतलब प्रकाश की गति है) के अनुसार गायब हुआ द्रव्यमान विघटित ऊर्जा Q, में परिवर्तित हो गया है। इस तरह Q = $(0.223511 \text{ u}) \times c^2 = 208.2 \text{ MeV}$ । इस विघटित ऊर्जा का लगभग 80% भाग दो टुकड़ों की गतिज ऊर्जा के रूप में होता है और बाकी की ऊर्जा न्यूट्रॉन और रेडियोधर्मी क्षय उत्पादों में जाती है। अगर यह विखंडन घटना घन पुंज (बल्क सॉलिड) में होती है तो ज्यादातर विघटित ऊर्जा घन की आंतरिक ऊर्जा को बढ़ाती है, जिससे घन का तापमान ऊर्जा के अनुरूप बढ़ता है। लगभग पांच

प्रतिशत जितनी विघटित ऊर्जा न्यूट्रीनों से जुड़ी हुई है जो प्राथमिक विखंडित टुकड़ों के बीटा क्षय के दौरान उत्सर्जित होती है। यह ऊर्जा, प्रणाली के बाहर चली जाती है और आंतरिक ऊर्जा बढ़ाने में कोई योगदान नहीं देती।

विखंडन प्रक्रिया कैसे आगे बढ़ती है?

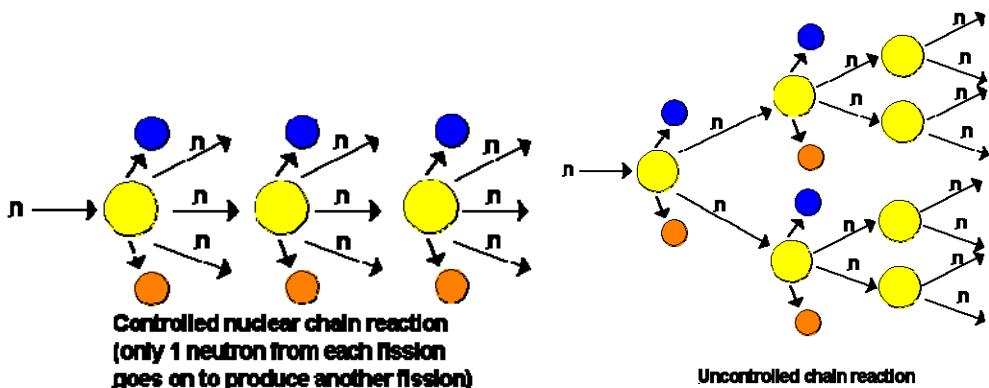
जब एक ^{235}U जैसा भारी नाभिक किसी तापीय न्यूट्रॉन को सोखता है तो ज्यादा ऊर्जा वाला $^{236}\text{U}^*$ नाभिक बनता है और वह तेजी से दोलने लगता है। इस दोलन गति में वो एक ऊर्जावान दोलन प्रभारित तरल बूंद की तरह व्यवहार करता है। बाद में देर-सवेर एक छोटी ग्रीवा विकसित होती है और फिर प्रभारित गोलक में अलग होना शुरू होता है। अगर परिस्थितियाँ सही रही तो दो गोलक के बीच का स्थिर विद्युत अपकर्षण उनको अलग करता है और ग्रीवा को तोड़ता है। अब दोनों टुकड़े कुछ उत्सर्जन ऊर्जा के साथ अलग हो जाते हैं और कुछ न्यूट्रॉन्स को अलग होने के लिए प्रेरित करते हैं। इस प्रकार विखंडन होता है।



हमें यह ध्यान देना चाहिए कि ^{235}U और ^{238}Pu ($Z=94$ परमाणु क्रमांक वाला प्लूटोनियम) नाभिक का विखंडन तापीय न्यूट्रॉन (0.04 eV ऊर्जा के साथ) की बौछार से हो सकता है जबकि ^{238}U का नहीं हो सकता। हम कहते हैं कि विखंडन प्रक्रिया होने के लिए ^{238}U की तुलना में ^{235}U और ^{238}Pu का अनुप्रस्थ खंड बहुत ज्यादा होता है। संयोग से अनुप्रस्थ खंड एक, विखंडन प्रतिक्रिया होने की संभावना का माप है और वह बार्न ($1\text{ barn} = 10^{-28} \text{ m}^2$) की इकाई में नापा जाता है। हमें यह ध्यान में लेना चाहिए कि ^{238}U का विखंडन तभी हो सकता है जब वह तापीय न्यूट्रॉन की तुलना में काफी हद तक शक्तिशाली न्यूट्रॉन को शोषित करें। विखंडन प्रक्रिया होने की उचित संभावना के लिये ^{238}U द्वारा शोषित न्यूट्रॉन की ऊर्जा कम से कम 1.3 MeV होनी चाहिए। इस ऊर्जा पर अनुप्रस्थ खंड काफी बड़ा होता है जिससे ^{238}U का विखंडन हो सकता है।

श्रृंखला प्रतिक्रिया

नाभिकीय विखंडन के तुरंत बाद यह एहसास हुआ कि विखंडन की वजह से पैदा हुए न्यूट्रोन आगे भी विखंडन कर सकते हैं जिसकी वजह से विखंडन की आत्मनिर्भर श्रेणी के निर्माण होने की संभावना है। इस आत्मनिर्भर श्रेणी को श्रृंखला प्रक्रिया कहते हैं। श्रृंखला प्रक्रिया बढ़ाने के लिए कैसी परिस्थिति चाहिए? हरेक विखंडन से पैदा हुए कम से कम एक न्यूट्रोन को औसतन एक और विखंडन करना चाहिए। अगर बहुत ही कम न्यूट्रोन विखंडन करने हैं तो श्रृंखला प्रतिक्रिया धीमी हो जायेगी और धीरे-धीरे निश्चित रूप से बंद हो जाएगी। अगर हरेक विखंडन का एक न्यूट्रोन, एक और विखंडन करता है तो समान मात्रा में ऊर्जा उत्पन्न होगी। इस तरह की प्रतिक्रिया को आत्मनिर्भर श्रृंखला प्रतिक्रिया कहते हैं। एक नाभिकीय संयंत्र में यही होता है। अगर विखंडन की आवृत्ति बढ़ती है तो प्रतिक्रिया बेकाबू हो जाती है और उससे ऊर्जा का इतना तीव्र उत्पादन होता है कि एक विस्फोट हो सकता है जैसा कि एक परमाणु बम में होता है। हमें ध्यान देना चाहिए कि ऐसी परिस्थितियों को उपक्रांतिक, क्रांतिक और अतिक्रांतिक कहते हैं।

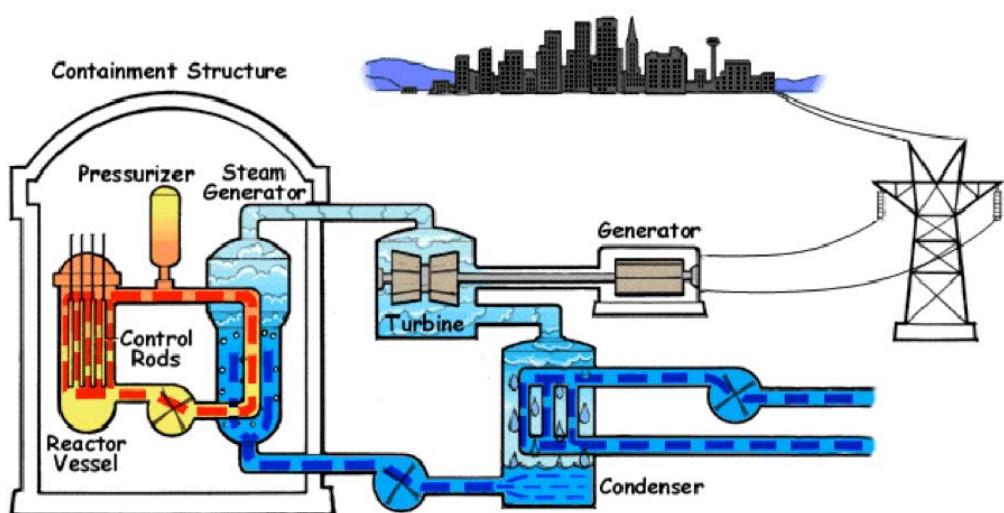


अगर एक परमाणु बम में हरेक विखंडन से मिले दो न्यूट्रोन 10^{-8} s के अंदर आगे विखंडन प्रेरित करते हैं तो एक एकल विखंडन से शुरू हुई श्रेणी प्रतिक्रिया 10^{-6} s से भी कम समय में 2×10^{13} जूल्स ऊर्जा दे सकती है। यह 0.25 kg ^{235}U के विखंडन से या तो 4.75 किलोटन TNT (ट्राइनाइट्रोटोल्युइन, एक विस्फोटक) के विस्फोट से मुक्त हुई ऊर्जा के समान होगी। लिटल बॉय नामक परमाणु बम को जब 6 अगस्त, 1945 में हिरोशिमा पर फेंका गया तो लगभग 15 किलोटन TNT जितनी ऊर्जा के साथ विस्फोट हुआ और फैटमेन नामक परमाणु बम जब 9 अगस्त 1945 को नागासाकी पर फेंका गया तो लगभग 20 किलोटन TNT जितनी ऊर्जा के साथ विस्फोट हुआ। भारत का सर्वप्रथम स्माइलिंग बुद्धा नाम का परमाणु विस्फोट परीक्षण 18 मई 1974 में किया गया था जो 12 किलोटन TNT के समान था। वर्तमान में अमेरिका के शस्त्रागार में 0.3 किलोटन से 1.2 मेगाटन TNT के परमाणु हथियार हैं।

नाभिकीय रिएक्टर (परमाणु भट्टी)

नाभिकीय रिएक्टर (चित्र 5) ऊर्जा का कार्यशील स्रोत है। 1 ग्राम ^{235}U का विखंडन लगभग 1 MW प्रतिदिन की दर से ऊर्जा उत्पन्न करता है। हालांकि इतनी ही ऊर्जा उत्पन्न करने के लिए पारंपरिक बिजली संयंत्र में प्रतिदिन 2.6 टन कोयला जलाना पड़ता है। रिएक्टर में उत्पादित की गई ऊर्जा ऊर्जा के रूप में होती है जिसको प्रवाही या वायु शीतलक द्वारा बाहर निकाला जाता है। इस गरम शीतलक से पानी उबाला जाता है और उत्पादित ध्वनि को टरबाइन में भेजा जाता है जो एक विद्युत जनरेटर (उत्पादक) को चलाता है। यह एक जहाज या पनडुब्बी को भी चला सकता है।

^{235}U के हरेक विखंडन में औसतन 2.5 न्यूट्रॉन निकलते हैं और प्रत्येक विखंडन में 1.5 से ज्यादा न्यूट्रॉन लुप्त नहीं होते। इसलिए इसमें ^{235}U नाभिक के विखंडन के लिए कम से कम एक न्यूट्रॉन उपलब्ध रहता है और इस प्रकार श्रृंखला प्रक्रिया निरंतर चलती है। कुदरती युरेनियम में 0.7 प्रतिशत ही ^{235}U विखंडन योग्य समस्थानिक होता है। हालांकि ज्यादा मात्रा में मिलने वाला ^{238}U भी ^{235}U के विखंडन से तेज न्यूट्रॉन्स को आसानी से सोख सकता है, परंतु वह विखंडित नहीं होता। जैसेकि पहले उल्लेख किया गया है कि ^{238}U का क्षेत्रफल धीमे न्यूट्रॉन को पकड़ने के लिए काफी कम है, जबकि ^{235}U का काफी बड़ा है। इसलिये विखंडन प्रक्रिया से उत्पादित हुए तेज न्यूट्रॉन को धीमा करने से ^{238}U द्वारा सोखना रोका जाता है और ^{235}U के विखंडन को आगे बढ़ाता है। विखंडित न्यूट्रॉन को धीमा करने के लिए युरेनियम रिएक्टर में मंदक मिलाया जाता है। मंदक एक भी न्यूट्रॉन को पकड़े बिना सिर्फ टकराव से तेज न्यूट्रॉन की ऊर्जा को सोखकर धीमा कर देता है। जब मंदक का द्रव्य, न्यूट्रॉन्स के बराबर होता है तब यह प्रक्रिया ज्यादा कार्यशील होती है। इसलिए आज के ज्यादातर व्यवसायिक रिएक्टरों में हल्का पानी मंदक और शीतलक दोनों की तरह उपयोग करते हैं। पानी के हरेक अणु में दो हाईड्रोजन परमाणु होते हैं जिनके प्रोटॉन नाभिकों के द्रव्य न्यूट्रॉन के बराबर होते हैं जो हल्के पानी को एक कार्यशील मंदक बनाता है।



हालांकि प्रोटॉन (^1H), ड्यूट्रॉन्स (^2H) बनाने के लिये न्यूट्रॉन्स को पकड़ने का प्रयास करते हैं। इसलिए लाइट-पानी रिएक्टर्स ईंधन के रूप में कुदरती युरेनियम का उपयोग नहीं कर सकते। बल्कि वे समृद्ध युरेनियम का उपयोग करते हैं जिसमें ^{235}U का भाग 3% तक बढ़ाते हैं। इस तरह

ज्यादा मात्रा में ^{235}U की मौजूदगी श्रृंखला प्रक्रिया को चालू रखने में मदद करती है। पानी मंदक रिएक्टर ^{235}U का ईंधन के रूप में उपयोग करता है और उसमें लंबी पतली नली में बंद किये गये युरेनियम ऑक्साइड (UO_2) की गुटिका भी होती है। श्रृंखला प्रक्रिया की गति को समायोजित करने के लिए कैडमियम या बोराँन की नियंत्रण छड़ों का उपयोग किया जाता है जो धीमे न्यूट्रॉन को आसानी से सोख लेते हैं। इन नियंत्रण छड़ों को रिएक्टर कोर में अंदर बाहर सरकाकर विखंडन प्रतिक्रिया की गति को समायोजित कर सकते हैं। रिएक्टर की सबसे प्रचलित रचना में कोर के ईंधन के आस-पास घूम रहे पानी का दबाव लगभग 155 एटमोस्फीयर रखा जाता है। इससे पानी उबलता नहीं है। मंदक और शीतलक की तरह उपयोग किये गये पानी को ऊष्मा आदान-प्रदान करने वाले यंत्र से बहाया जाता है जिससे टरबाइन चलाने वाली भाप पैदा होती है। ^{235}U मात्रा घट जाने पर हर कुछ वर्षों में रिएक्टर के ईंधन को बदलना पड़ता है।

प्रजनक रिएक्टर्स

कुछ अविखंडनीय नाभिक (विशिष्ट संख्या के प्रोटॉन्स और न्यूट्रॉन्स वाले नाभिक) न्यूट्रॉन शोषित करके विखंडनीय बन सकते हैं। उदाहरण के लिए ^{238}U लिजिए। वह न्यूट्रॉन सोखने पर ^{239}U बन जाता है। यह युरेनियम समस्थानिक इलेक्ट्रॉन उत्सर्जन (बीटा क्षय) द्वारा तुरंत (लगभग 23 मिनट में) क्षय होकर $^{239}\text{Np}_{93}$ बनता है जो कि नेप्युनियम तत्व का समस्थानिक है, जो खुद भी 2.3 दिन के आधे जीवन वाला बीटा सक्रिय है और वह $^{239}\text{Pu}_{94}$ बनाता है, जो कि प्लूटोनियम का समस्थानिक है और 24000 साल के अर्धे जीवन के साथ लंबे समय तक रहता है। हमें यह ध्यान देना चाहिए कि नेप्टुनियम और प्लूटोनियम दोनों ही परायुरेनिक तत्व हैं और धरती पर नहीं पाये जाते। हमें ये पृथक् पर नहीं मिलते क्योंकि अगर ये 4.5 अरब साल पहले पृथक् के निर्माण के समय मौजूद होते तो भी नहीं बचते, क्योंकि उनका जीवन बहुत छोटा है। हमें यह ध्यान देना चाहिए कि अब तक परमाणु क्रमांक ($Z=118$) तक के परायुरेनियम तत्वों का प्रयोगशाला में निर्माण किया गया है और वे सभी बहुत ही रेडियोधर्मी और अल्पजीवी हैं।

अब प्लूटोनियम समस्थानिक ^{239}Pu विखंडनीय है और उसका उपयोग रिएक्टर ईंधन और शस्त्रों में किया जा सकता है। इस तरह प्रजनक रिएक्टर अनुपयोगी ^{238}U का रूपांतरण करता है, जो विखंडनीय ^{235}U की तुलना में 140 गुना ज्यादा प्रचुर है। प्रजनक रिएक्टर की रचना खास करके इस प्रकार बनाई जाती है कि वह उपयोग में लिये गये ^{235}U की तुलना में ज्यादा मात्रा में ^{239}Pu का निर्माण करें। प्रजनक रिएक्टर के बड़े पैमाने पर उपयोग का मतलब यह है कि युरेनियम के जात भंडार रिएक्टरों को कई सदियों तक ईंधन प्रदान कर सकते हैं। हालांकि ^{239}Pu का उपयोग परमाणु बम बनाने में हो सकता है और होता भी है, प्रजनक रिएक्टर में ^{239}Pu का उत्पादन दुनिया में परमाणु शस्त्रों के नियंत्रण को उलझा/मुश्किल बना सकता है। किसी भी स्थिति में प्रजनक रिएक्टर बहुत ही खर्चाले हैं और गंभीर परिचालन समस्या वाले साबित हुए हैं।

^{238}U की तरह थोरियम नाभिक $^{232}\text{Th}_{90}$ भी उपजाऊ नाभिक है। $^{232}\text{Th}_{90}$ का रूपांतरण इसके विखंडनीय नाभिक में हो सकता है और इसलिए उसका उपयोग ईंधन की तरह नाभिकीय

रिएक्टर में होता है। न्यूट्रॉन सोखने के बाद और दो बीटा क्षय के दौर से गुजरने के बाद $^{232}\text{Th}_{90}$ का रूपांतर ^{233}U में होता है जो विखंडनीय है। ^{238}U में ^{239}Pu और ^{232}Th से ^{233}U का रूपांतरण ही प्रजनक रिएक्टर का आधार है जो उपयोग में लिये गये ^{235}U की तुलना में ज्यादा ईंधन का उत्पादन करता है! भारत इस संभावना को लक्ष्य से देख रहा है। क्योंकि हमारे युरेनियम भंडार अल्प है, हालांकि थोरियम भंडार काफी है।

नाभिकीय संलयन से ऊर्जा

अगर दो हल्के नाभिक को जोड़कर एक थोड़ी बड़ी द्रव्य क्रमांक वाली नाभिक बनाई जाए तो भी ऊर्जा मुक्त होती है। इस तरह बनी भारी नाभिक का द्रव्य, प्रक्रिया से पहले ली गई हल्की नाभिकों से कम होता है। यह द्रव्य अंतर, आइन्स्टाइन के द्रव्य-ऊर्जा संबंध के अनुसार ऊर्जा के रूप में प्रतीत होता है। इस प्रक्रिया को नाभिकीय संलयन कहते हैं। हालांकि पारस्परिक कुलंब अपकर्षण इस प्रक्रिया को अवरुद्ध करता है, जो ऐसे दो धनभारित कणों को एक दूसरे के नाभिकीय बलों की सीमा में प्रवेश करने से और जुड़ने से रोकता है। यह पता चला है कि दो ड्युटेरियम (^2H) के लिये इस कुलंब अवरोध को पार करने के लिए हरेक कण को लगभग 200KeV ऊर्जा चाहिए। संलयन प्राप्त करने के लिए इतनी ज्यादा मात्रा में ऊर्जा कैसे मिलेगी? कमरे के तापमान पर एक कण की औसत तापीय ऊर्जा सिर्फ लगभग 0.04 eV जितनी होती है। स्थूल पदार्थ में संलयन करने का सबसे अच्छा तरीका पदार्थ का तापमान बढ़ाना है, जिसकी वजह से कणों को उष्मीय गति से ही कुलंब अवरोध को पार करने के लिए जरूरी ऊर्जा मिलती है। इस प्रक्रिया को ताप नाभिकीय संलयन कहते हैं।

कमरे के तापमान पर कण की औसत गतिज ऊर्जा बहुत कम होने की वजह से हम संलयन प्रक्रिया होने की उम्मीद नहीं रख सकते। यहाँ तक की सूर्य के केन्द्र में जहाँ 1.5×10^7 K केल्विन तापमान होने पर भी औसत तापीय गतिज ऊर्जा सिर्फ 1.9 KeV जितनी ही होती है जो 200 KeV की तुलना में काफी कम है। पर फिर भी हम जानते हैं कि ताप नाभिकीय संलयन न सिर्फ सूर्य के भीतर होता है पर वह उसका केन्द्रीय और प्रमुख लक्षण है। तो सूर्य के भीतर नाभिकीय संलयन प्रतिक्रिया किस प्रकार होती है? हालांकि 1.9KeV औसत तापीय गतिज ऊर्जा है, लेकिन बहुत कम संख्या में इस औसत संख्या की तुलना में बहुत ज्यादा ऊर्जा वाले कण भी मौजूद होते हैं। जिन कणों की गतिज ऊर्जा बाधा ऊर्जा से कम होती है उनके लिये यह संभावना है कि वह बाधा में सुरंग करके महत्वपूर्ण स्तर पर पहुँच सकते हैं - शुद्ध क्वांटम यांत्रिक परिघटना! इन्हीं प्रक्रियाओं की वजह से सूर्य के भीतर संलयन प्रतिक्रिया होती है।

हमारे पास पहले से ही कई रिएक्टर्स हैं, जो नाभिकीय विखंडन से ऊर्जा उत्पन्न करते हैं। परंतु क्या हम ऐसा रिएक्टर बना सकते हैं जिसमें नियंत्रित ताप नाभिकीय संलयन से ऊर्जा उत्पन्न हो? हमारे पास सागर और समुद्र के पानी के रूप में बहुत ज्यादा मात्रा में हाईड्रोजन का संग्रह है और इसीलिए संलयन द्वारा ऊर्जा उत्पन्न करने की विशाल क्षमता है। सही में यह संभावना आकर्षक दिखती है! जब अक्टूबर 1952 में पहले संलयन (हाईड्रोजन) बम का विस्फोट

हुआ था, तब से वास्तव में पृथकी पर संलयन प्रतिक्रियाएँ शुरू हुई हैं। इस मामले में तापनाभिकीय प्रतिक्रिया को चालू करने के लिये जरूरी उच्च तापमान, ट्रीगर की तरह उपयोग किये गये परमाणु बम द्वारा उपलब्ध कराया जाता है। हालांकि एक निरंतर और नियंत्रित ताप नाभिकीय शक्ति स्रोत, संलयन रिएक्टर को हासिल करना बहुत ही मुश्किल साबित हुआ है। यह लक्ष्य प्राप्त करने के लिये काफी लोग उत्साहपूर्वक लगे हुए हैं, क्योंकि वे समझते हैं कि कम से कम जहाँ तक विद्युत उत्पादन की बात है यह भविष्य का सर्वोत्तम शक्ति स्रोत है।

नाभिकीय ऊर्जा: केवल शक्ति और शस्त्रों के लिये नहीं है!

नाभिकीय ऊर्जा का मतलब सिर्फ नाभिकीय रिएक्टर्स और परमाणु शस्त्र ही नहीं हैं! वह सुरक्षित, और पर्यावरण के अनुकूल है और उसके विभिन्न प्रकार के क्षेत्र जैसे की स्वास्थ्य और औषधि, उद्योग, जल विज्ञान, खाद्य-संरक्षण और खेती-बाड़ी में अनगिनत उपयोग है। हमें यह ध्यान देना चाहिए कि विशेषकर भारत में परमाणु कृषि के क्षेत्र में भाभा परमाणु अनुसंधान केन्द्र (BARC) द्वारा विकसित किये गये उत्परिवर्ती मूँगफली के बीज का देश की कुल मूँगफली की खेती में लगभग 25% योगदान है। इसी तरह BARC द्वारा विकसित उत्परिवर्ती काली दाल(उड्द) के बीज का योगदान राष्ट्रीय खेती में 22 प्रतिशत है। महाराष्ट्र राज्य में यह 95 प्रतिशत जितना ऊंचा है। हकीकित में कोई दोराय नहीं है कि जहाँ तक भविष्य की ऊर्जा की जरूरत और आर्थिक विकास का संबंध है, आने वाले दशकों में परमाणु ऊर्जा हमारे देश के लिये अत्यंत उपयोगी साबित होगी।

सन् 1911 में अर्नस्ट रधरफोर्ड द्वारा नाभिक की खोज और सन् 1913 में नील्स बोह्न द्वारा परमाणु की संरचना की खोज के बाद आज हम वाकई में काफी आगे आ चुके हैं!

संदर्भ

1. Sourcebook on Atomic Energy by S. Glasstone 1967 Pub: Van Nostrand
2. Concepts of Modern Physics by Arthur Beiser 2003 Pub: Tata Mc Grow-Hill
3. Nuclear Physics by Irving Kaplan 1962 Pub: Addison-Wesley / Oxford & IBH
4. Quantum Physics by Robert Eisberg & Robert Resnick 2002 John Wiley
5. Physics by David Halliday, Robert Resnick, and Kenneth S Krane 1992 John Wiley
6. Numerous articles in Wikipedia

1986 में स्थापित प्लाज़मा अनुसंधान संस्थान (आईपीआर), परमाणु ऊर्जा विभाग, भारत सरकार के अंतर्गत एक स्वायत्तशासी संस्थान है, जो अधिकृत रूप से प्लाज़मा विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी में अनुसंधान के लिए कार्यरत है। प्रमुख रूप से चुम्बकीय सीमित प्लाज़मा (टोकामक) और प्लाज़मा आधारित तकनीकियों के औद्योगिक अनुप्रयोगों को बढ़ावा देना एवं भारत में प्लाज़मा अनुसंधान को प्रोत्साहित करना इसका उद्देश्य है। प्लाज़मा अनुसंधान संस्थान ने भारत के पहले टोकामक, "आदित्य" एवं एक उन्नत टोकामक मशीन 'स्थिर-अवस्था अतिचालक टोकामक (एसएसटी-1)' को देश में ही निर्मित एवं परिचालित किया है। भारत अंतर्राष्ट्रीय तापनाभिकीय प्रायोगिक रिएक्टर (आईटीईआर) नामक महत्वाकांक्षी अंतर्राष्ट्रीय परियोजना में सहयोगी देशों में से एक है, जो भविष्य में नाभिकीय संलयन प्रक्रिया से बिजली प्राप्त करने की दिशा में एक कदम है।



प्लाज़मा अनुसंधान संस्थान

भाट, निकट इंदिरा पुल, गांधीनगर 382428, गुजरात (भारत)
दूरभाष: 079-2396 2000 वेब: www.ipr.res.in

परमाणु ऊर्जा विभाग, भारत सरकार के अंतर्गत एक स्वायत्तशासी संस्थान